Front Inside Cover

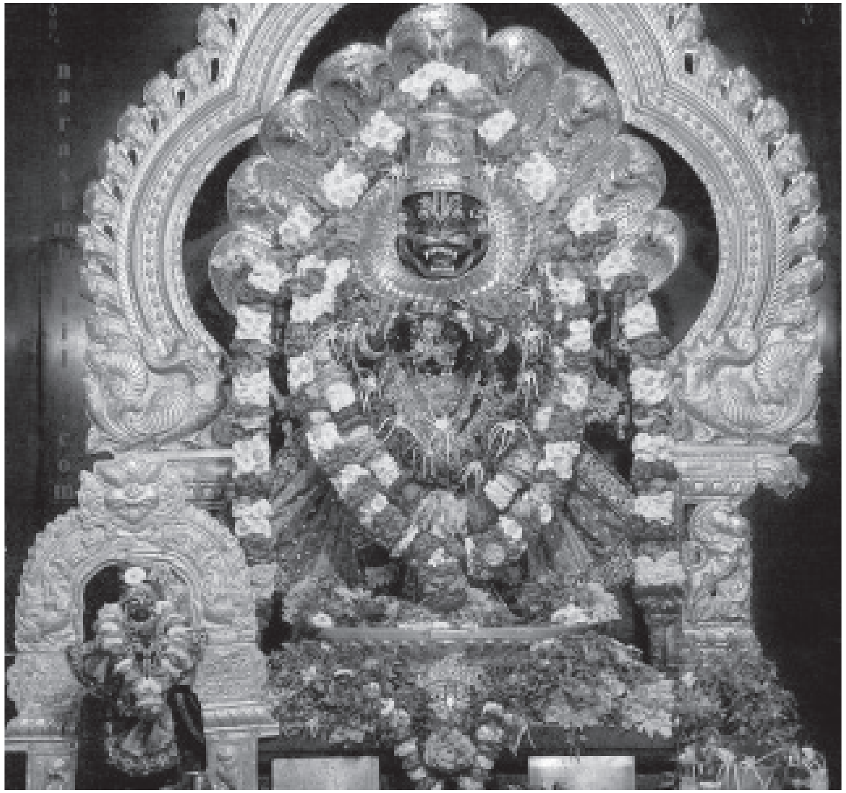

श्री श्री नृसिंह देव के प्रति प्रार्थना

जय नृसिंह श्री नृसिंह
जय जय जय श्री नृसिंह
उग्रं वीरं महा विष्णुं
ज्वलतं सर्वतो मुखम
नृसिंहं भीषणं भद्रं
मृत्योमृत्युं नमाम्यहं
श्री नृसिंह जय नृसिंह जय जय नृसिंह
प्रह्लादेश जय पद्मा मुख पद्म भृंग ।।

प्रतिवेदन

सभी युगों में धर्म की संस्थापना एवं अपने शुद्ध भक्तों की रक्षा के लिये भगवान ने अवतार लिया है। विभिन्न लीलाओं के माध्मम से उन्हींने आदर्शों को स्थापित किया है। नृसिंहदेव भगवान का अवतरण काफी विलक्षण एवं विस्मयकारी है। मायापुर में उनके आने की कहानीभी कम विस्मयकारी नहीं है। अपने अगणित भक्तों को उन्होंने अपनी कृपा का प्रसाद दिया है। इस अंक में उन विवरणों को समाहित किया गया है।

असुर कुल में पैदा होकर भी प्रह्लाद महाराज भगवान के परम भक्त बने। उन्होंने संदेश दिया -

श्रवणं कीर्तन विष्णों : स्मरणं पादसेवनम।
अर्चन बंदनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम।।
इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा।
क्रियते भगवत्यद्धा तन्मयेऽधीत मुत्तमम्।।

"भगवान की भक्ति के नौ भेद - भगवान के गुण लीला नाम आदि का स्मरण, उनके चरणों की सेवा, पूजा अर्चना, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन। यदि भगवान के प्रति समर्पण भाव से यह नौ प्रकार की भक्ति की जाय, तो मैं उसी को उत्तम अध्ययन मानता हूँ।"

जैसे भगवान के गुण अनन्त हैं, वैसे ही प्रहलाद महाराज के श्रेष्ठ गुणों की भी सीमा नहीं है। केवल एक ही गुण भगवान श्रीकृष्ण के चरणों में स्वाभाविक जन्मजात प्रेम उनकी महिमा को प्रकट करने के लिये पर्याप्त है।

श्री मद्भागवतम के सप्तम स्कंद में भगवान नृसिंहदेव के विस्मयकारी रूप एवं लीला का विस्तार से विवरण दिया है, जिससे हमें भगवान के असीम एवं अजेय शक्ति एवं करुणा का एक साथ अनुभव होता है। इस विस्तारित विवरण को इस संस्करण में समाहित किया गया हैं।

श्रीमद्भागवत में प्रह्लाद महाराज ने भगवान नृसिंहदेव को शांत करने के लिये उनकी स्तुति की। इस स्तुति के बारे में स्वयं भगवान ने श्रीमद्भागवतम में कहा है कि 'तुम्हारे प्रह्लाद के) द्वारा की हुई इस स्तुति का जो मनुष्य कीर्तन करेगा और साथ ही मेरा एवं तुम्हारा स्मरण भी करेगा, वह समय पर कर्मों के बंधन से मुक्त हो जायगा। इसकी महत्ता को देखते हुए इस स्तुति को भी इस संस्करण में समाहित किया गया है ताकि हम सभी अपने जीवन में भगवान की भक्ति में अग्रगति के लिये भगवान नृसिंहदेव से यथोचित प्रार्थना निवेदन कर सकें।

मैं परम वैष्णव भक्त श्रीमद् पंकजआंघ्री दास ब्रह्मचारी का सदैव आभारी रहूंगा, जिनकी कृपा से मुझे यह अवसर मिला है।

- शिवकुमार लोहिया

प्रकाशक : इसकान, श्रीधाम, मायापुर, नदीया

प्रथम संस्करण : श्री नृसिंह चतुर्दशी, 2009

अंग्रेजी से अनुवाद : शिवकुमार लोहिया
Email : sklohia2001@yahoo.co.in

स्वर्गीय श्रीमती सुलोचना लोहिया
(धर्मपत्नी - श्री शिव कुमार लोहिया)
की पुण्य स्मुति में लोहिया परिवार के
सहयोग से लिये भगवान से प्रार्थना
है कि उसे अपने चरनो में स्थान दें।

Printed by : Laser Images Pvt. Ltd.
3/1, Mangoe Lane, Kolkata - 700 001
Ph. 2210-4084 • info.laserimages@gmail.com

श्री श्री नरसिंह अवतार

हरेकृष्ण टूडे पत्रिका में नृसिंह अवतार के संबंध में श्री अर्जुन दास ने एक निबंध लिखा है। उसका हिंदी अनुवाद यहां दिया जा रहा है।

श्री विष्णु के प्रधान दस अवतारों में श्री नृसिंह चतुर्थ अवतार हैं। श्रील व्यास देव के पिता महर्षि पाराशर अपने होरा शास्त्र में परमेश्वर भगवान के चार स्वरूपों में से श्री नृसिंहदेव का अन्यतम प्रधान प्रकाश के रूप में वर्णन किए हैं। श्री नृसिंहदेव सम्पूर्ण रूप से परमात्मंश हैं एवं भगवान के अपरापर प्रकाश में अन्यतम हैं। श्रीमदभागवत के सातवें स्कंद में परमेश्वर भगवान के विस्मयकारी आविर्भाव एवं महिमा का वर्णन मिलता है।

बहुत दिन पहले हिरण्यकशिपु नामक एक महाशक्तिशाली दैत्य था। स्वर्ग के राजा इन्द्र सह अन्य अपरापर देवताओं को युद्ध में पराजित कर वह विश्व ब्रह्मांड का एकछत्र अधिपति बन गया। अपने अमरत्व प्राप्ति के लिए एक बार वह कठोर तपस्या में नियोजित हो गया। अपने दोनों हाथों को उपर उठा कर खड़े खड़े सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा से अमरत्व लाभ के वर प्राप्ति के लिए दीर्घ दिनों तक तपस्या में लीन रहा। इस प्रकार कई वर्ष बीत गए। एक समय हिरण्यकशिपु के सिर से आग एवं धुंआ निकलने लगा। फलस्वरूप विश्व ब्रह्मांड के सारे प्राणियों का जीवन संकट में पड़ गया। तब सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा का आविर्भाव हुआ एवं उन्होने हिरण्यकशिपु से कहा कि वे स्वयं भी अमर नही हैं। इसलिए उसे अमर होने का वर प्रदान नहीं कर सकते। तब उन्होने हिरण्यकशिपु को यह वर दिया कि वह कोई अस्त्र, दैत्य-दानव, देवता, मनुष्य, पशु इत्यादि के द्वारा नही मारा जा सकेगा। साथ ही वह अंदर या बाहर, दिन या रात में भी नही मारा जा सकेगा। ब्रह्मा से वर प्राप्त करने के लिए जब हिरण्यकशिपु राज्य का त्याग कर तपस्या में लीन हो गया, उस समय इन्द्र उसकी

गर्भवती पत्नी को हरण करके ले गया। इसके पीछे उसके गर्भस्थ संतान को नष्ट करने का उद्देश्य था। कारण, इन्द्र सहित अन्य देवतागण यह सोचते थे कि उसकी संतान भी हिरण्यकशिपु की भांति ही एक शक्तिशाली दानव होगा। किन्तु देवर्षि नारद ने देवताओं को यह काम करने से रोका एवं उसे हिमालय स्थित अपने आश्रम में ले गए। वहाँ पर वे उस रमणी एवं उसके गर्भस्थ संतान को भगवान संबंधित सर्वोत्तम ज्ञान एवं उत्तम सेवा के विभिन्न तरह के उपदेश प्रदान किए। तपस्या से लौटकर हिरण्यकशिपु फिर से जब देवताओं पर अपना अधिपत्य विस्तार किया, तो नारद मुनि ने उनकी स्त्री एवं पुत्र प्रह्लाद को लौटा दिया।

अल्प आयु से ही प्रह्लाद विष्णु के पंचम भक्त बन गए। उनके पिता एवं शिक्षकों के निषेध एवं विभिन्न प्रकार उपदेश के बावजूद वे स्कूल के बंधु बांधवों को विष्णु भक्त होने एवं विष्णु की सेवा करने के सदुपदेश देते। हिरण्यकशिपु विष्णु को अपना परम शत्रु मानता था। शत्रु के प्रति पुत्र की अचला भक्ति देखकर हिकण्यकशिपु हताश हो गया। अंत में उसने विभिन्न उपायों से प्रह्लाद को जान से मारने का प्रयास किया। किन्तु परमेश्वर भगवान श्री विष्णु की कृपा से प्रत्येक बार ही प्रह्लाद के प्राणों की रक्षा हो जाती। होलिका नामक हिरण्यकशिपु की एक बहन थी। उसके पास एक ऐसी साड़ी थी, जिसे पहनने से अग्नि से रक्षा हो जाती थी। एक दिन प्रह्लाद को लेकर होलिका वही साड़ी पहन कर आग में कूद पड़ी, ताकि प्रह्लाद जलकर मारा जाय। इस घटना का स्मरण करके ही विश्व के विभिन्न स्थानों में हिन्दू प्रत्येक वर्ष फाल्गुन मास के पूर्णिमा के दिन होलिका उत्सव पालन करते हैं? किसी भी प्रकार से विष्णु भक्ति से विच्युत न कर सकने पर एक दिन हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को बुलाकर पूछा कि उसका परित्राण करने वाले भगवान कहाँ रहते हैं? उत्तर में प्रह्लाद ने कहा कि वे सर्वत्र हैं एवं सब कुछ के बीच में निवास करते हैं। हिरण्यकशिपु ने तब स्तंभ दिखाकर कहा कि क्या वे इसके अंदर भी हैं? प्रह्लाद ने कहा - हाँ। प्रचंड रूप से क्रोधित होकर हिरण्यकशिपु ने कहा - तब मैं उसे अभी मार डालूंगा। इतना कहकर हिरण्यकशिपु ने अपने गदा से जोर से स्तंभ में आघात किया। उसी क्षण घोर गर्जना के साथ बज्र की तरह शब्द करते हुए नृसिंहदेव उस स्तंभ से अवतरित हुए। बिल्ली जिस तरह चूहे के साथ खिलवाड़ करती है, उसी प्रकार का युद्ध करते हुए नृसिंहदेव ने हिरण्यकशिपु को अपने गोद में स्थापित कर अपने हाथों की अंगुलियों के कठिन नखाघात से उसे छिन्न विछिन्न कर दिया। हिरण्यकशिपु का वध करते समय भगवान नृसिंहदेव ने ब्रह्मा द्वारा दिए गए सभी वर की रक्षा की थी। वे अर्द्धमानव एवं अर्द्धसिंह के रूप में अवतरित हुए थे एवं गोधुलि बेला में हिरण्यकशिपु को महल के प्रवेश द्वार के बीचोंबीच मारा था। इस प्रकार श्रीनृसिंहदेव अपने परम भक्त प्रह्लाद की रक्षा करने के साथ साथ विश्व ब्रह्मांड को एक अत्याचारी शासक से मुक्त किया। इसीलिए उन्हें भक्त वत्सल के रूप में जाना जाता है एवं यथार्थ में बुद्धिमान व्यक्ति उनकी पूजा अर्चना करते हैं।

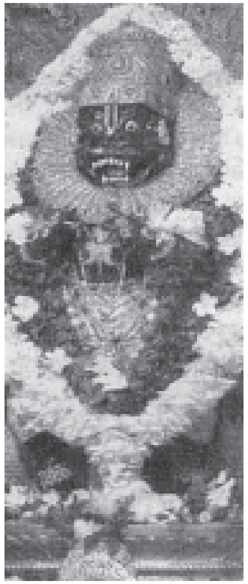

श्रीमद्भागवतम् में भगवान नृसिंहदेव की अवतार लीला

भक्त प्रहलाद बचपन से ही भगवान की भक्ति में लग गये थे एवं अपने गुरुकुल के सभी दैत्यबालकों को भगवान का लीलामृत पान करवाते थे। प्रह्लादजी का प्रवचन सुनकर दैत्यबालकों ने निर्दोष होने के कारण, उनकी बात पकड़ ली। गुरुजी की दूषित शिक्षा की ओर उन्होंने ध्यान ही न दिया। जब गुरुजी ने देखा कि उन सभी विद्यार्थियों की बुद्धि एकमात्र भगवान् में स्थिर हो रही है, तब वे बहुत घबराये और तुरंत हिरण्यकशिपु के पास जाकर निवेदन किया। अपने पुत्र प्रह्लाद की इस असह्य और अप्रिय अनीति को सुनकर क्रोध के मारे उसका शरीर थर-थर काँपने लगा। अन्त में उसने यही निश्चय किया कि प्रह्लाद को अब अपने ही हाथ से मार डालना चाहिये।

मन और इन्द्रियों को वश में रखनेवाले प्रह्लादजी बड़ी नम्रतासे हाथ जोड़कर चुपचाप हिरण्यकशिपु के सामने खड़े थे और तिरस्कार के सर्वथा अयोग्य थे। परन्तु हिरण्यकशिपु स्वभाव से ही क्रूर था। वह पैर की चोट खाये हुए साँप की तरह फुफकारने लगा। उसने उनकी ओर पापभरी टेढ़ी नजर से देखा और कठोर वाणी से डाँटते हुए कहा - 'मूर्ख! तू बड़ा उद्दण्ड हो गया है। स्वयं तो नीच है ही, अब हमारे कुलके और बालकों को भी फोड़ना चाहता है! तूने बड़ी ढ़िठाई से मे मेरी आज्ञा का उल्लङ्घन किया है। आज ही तुझे यमराज के घर भेजकर इसका फल चखाता हूँ। मैं तनिक-सा क्रोध करता हूँ, तो तीनों लोक और उनके लोकपाल काँप उठते हैं। फिर मूर्ख! तूने किसके बल-बूते पर निडर की तरह मेरी आज्ञा के विरुद्ध काम किया है?'

प्रह्लादजीने कहा - दैत्यराज! ब्रह्मा से लेकर तिनके तक सब छोटे-बड़े, चर-अचर जीवों को भगवान ने ही अपने वशमें कर रखा है। न केवल मेरे और आपके, बल्कि संसार के समस्त बलवानों के बल भी केवल वही हैं। वे ही महापराक्रमी सर्वशक्तिमान् प्रभु काल हैं तथा समस्त प्राणियों के इन्द्रियबल, मनोबल, देहबल, धैर्य एवं इन्द्रिय भी वही हैं। वही परमेश्वर अपनी शक्तियों के द्वारा इस विश्वकी रचना, रक्षा और संहार करते हैं। वे ही तीनों गुणों के स्वामी हैं। आप अपना यह आसुर भाव छोड़ दीजिये। अपने मन को सबके प्रति समान बनाइये। इस संसारमें अपने वश में न रहनेवाले कुमार्गगामी मन के अतिरिक्त और कोई शत्रु नहीं है। मन में सबके प्रति समता का भाव लाना ही भगवान की सबसे बड़ी पूजा है। **जो लोग अपना सर्वस्व लूटनेवाले इन छ: इन्द्रियरूपी डाकुओं पर तो पहले विजय नहीं प्राप्त करते और ऐसा मानने लगते हैं कि हमने दसों दिशाएँ जीत लीं, वे मूर्ख हैं।** हाँ, जिस ज्ञानी एवं जितेन्द्रिय महात्मा ने समस्त प्राणियों के प्रति समता का भाव प्राप्त कर लिया, उसके अज्ञान से पैदा होनेवाले काम-क्रोधादि शत्रु भी मर-मिट जाते हैं; फिर बाहर के शत्रु तो रहें ही कैसे।

हिरण्यकशिपुने कहा - रे मन्दबुद्धि! तेरे बहकने की भी अब हद हो गयी है। यह बात स्पष्ट है कि अब तू मरना चाहता है। क्योंकि जो मरना चाहते हैं, वे ही ऐसी बेसिर-पैरकी बातें बका करते हैं। अभागे! तूने मेरे सिवा जो और किसीको जगत का स्वामी बतलाया है, सो देखूँ तो तेरा वह जगदीश्वर कहाँ है? अच्छा, क्या कहा, वह सर्वत्र है? तो इस खंभे में क्यों नहीं दिखता? अच्छा, तुझे इस खंभे में भी दिखायी देता है! अरे, तू क्यों इतनी डींग हाँक रहा है? मैं अभी-अभी तेरा सिर धड़ से अलग किये देता हूँ। देखता हूँ तेरा वह सर्वस्व हरि, जिसपर तुझे इतना भरोसा है, तेरी कैसे रक्षा करता है? इस प्रकार वह अत्यन्त बलवान महादैत्य भगवान् के परम प्रेमी प्रह्लाद को बार-बार झिड़कियाँ देता और सताता रहा। जब क्रोध के मारे

वह अपने को रोक न सका, तब हाथ में खड्‌ग लेकर सिंहासन से कूद पड़ा और बड़े जोर से उस खंभे को घूँसा मारा। उसी समय उस खंभे में एक बड़ा भयङ्कर शब्द हुआ। ऐसा जान पड़ा मानो यह ब्रह्माण्ड ही फट गया हो। वह ध्वनि जब लोकपालों के लोक में पहुँची, तब उसे सुनकर ब्रह्मादि को ऐसा जान पड़ा, मानो उनके लोकों का प्रलय हो रहा हो। हिरण्यकशिपु प्रह्लाद को मार डालने के लिये बड़े जोर से झपटा था; परन्तु दैत्यसेनापतियों को भी भय से कँपा देनेवाले उस अद्भुत और अपूर्व घोर शब्द को सुनकर वह घबराया हुआ-सा देखने लगा कि यह शब्द करनेवाला कौन है? परन्तु उसे सभा के भीतर कुछ भी दिखायी न पड़ा।

इसी समय अपने सेवक प्रह्लाद और ब्रह्मा की वाणी सत्य करने और समस्त पदार्थों में अपनी व्यापकता दिखाने के लिये सभा के भीतर उसी खंभे में बड़ा ही विचित्र रूप धारण करके भगवान प्रकट हुए। वह रूप न तो पूरा-पूरा सिंह का ही था और न मनुष्य का ही। जिस समय हिरण्यकशिपु शब्द करनेवाले की इधर-उधर खोज कर रहा था, उसी समय खंभे के भीतर से निकलते हुए उस अद्भुत प्राणीको उसने देखा। वह सोचने लगा - अहो, यह न तो मनुष्य है और न पशु: फिर यह नृसिंह के रूपमें कौन-सा अलौकिक जीव है! **जिस समय हिरण्यकशिपु इस उधेड़-बुनमें लगा हुआ था, उसी समय उसके बिलकुल सामने ही नृसिंहभगवान खड़े हो गये। उनका वह रूप अत्यधिक भयावना था। तपाये हुए सोनेके समान पीली-पीली भयानक आँखें थीं। जँभाई लेने से गरदनके बाल इधर-उधर लहरा रहे थे। दाढ़ें बड़ी विकराल थीं। तलवार की तरह लपलपाती हुई छूरे की धार के समान तीखी जीभ थी। टेढ़ी भौंहों से उनका मुख और भी दारुण हो रहा था। कान निश्चल एवं ऊपर की ओर उठे हुए थे। फूली हुई नासिका और खुला हुआ मुँह पहाड़ की गुफा के समान अद्भुत जान पड़ता था। फटे हुए जबड़ों से उसकी भयङ्करता बहुत बढ़ गयी थी। विशाल शरीर स्वर्ग का स्पर्श कर रहा था। गरदन कुछ नाटी और मोटी थी। छाती चौड़ी और कमर बहुत पतली थी। चन्द्रमा की किरणों के समान सफेद रोएँ सारे शरीर पर चमक रहे थे, चारों ओर सैकड़ों भुजाएँ फैली हुई थीं, जिनके बड़े-बड़े नख आयुध का काम देते थे। उनके पास फटकने तक का साहस किसी को न होता था। चक्र आदि अपने निज आयुध तथा वज्र आदि अन्य श्रेष्ठ शस्त्रों के द्वारा उन्होंने सारे दैत्य-दानवों को भगा दिया। हिरण्यकशिपु सोचने लगा - हो-न-हो महामायावी विष्णु ने ही मुझे मार डालने के लिये यह ढंग रचा है; परन्तु इसकी इन चालोंसे हो ही क्या सकता है?**

इस प्रकार कहता और सिंहनाद करता हुआ दैत्यराज हिरण्यकशिपु हाथ में गदा लेकर नृसिंहभगवान पर टूट पड़ा। परन्तु जैसे पतंगा आग में गिरकर अदृश्य हो जाता है, वैसे ही वह दैत्य भगवान के तेजके भीतर जाकर लापता हो गया। समस्त शक्ति और तेज के आश्रय भगवान के सम्बन्ध में ऐसी घटना कोई आश्चर्यजनक नहीं है; क्योकि सृष्टिके प्रारम्भ में उन्होंने अपने तेजसे प्रलयके निमित्तभूत तमोगुणरूपी घोर अन्धकार को भी पी लिया था। तदन्तर वह दैत्य बड़े क्रोध से लपका और अपनी गदा को बड़े जोर से घुमाकर उसने नृसिंहभगवान पर प्रहार किया। प्रहार करते समय ही - जैसे गरुड़ साँप को पकड़ लेते हैं, वैसे ही भगवान ने गदासहित उस दैत्य को पकड़ लिया। वे जब उसके साथ खिलवाड़ करने लगे, तब वह दैत्य उनके हाथ से वैसे ही निकल गया, जैसे क्रीडा करते हुए गरुड के चंगुल से साँप छूट जाय। उस समय सब-के-सब लोकपाल बादलों में छिपकर इस युद्ध को देख रहे थे। उनका स्वर्ग तो हिरण्यकशिपु ने पहले ही छीन लिया था। जब उन्होंने देखा कि वह भगवान के हाथसे छूट गया, तब वे और भी डर गये। हिरण्यकशिपु ने भी यही समझा कि नृसिंह ने मेरे बलवीर्य से डरकर ही मुझे अपने हाथ से छोड़ दिया है।

इस विचार से उसकी थकान जाती रही और वह युद्ध के लिये ढाल-तलवार लेकर फिर उनकी ओर दौड़ पड़ा। उस समय वह बाज की तरह बड़े वेग से ऊपर-नीचे उछल-कूदकर इस प्रकार ढाल-तलवारके पैंतरे बदलने लगा कि जिससे उस पर आक्रमण करने का अवसर ही न मिले। तब भगवान ने बड़े ऊँचे स्वर से प्रचण्ड और भयङ्कर अट्टहास किया, जिससे हिरण्यकशिपु की आँखें बंद हो गयीं। फिर बड़े वेगसे झपटकर भगवान ने उसे वैसे ही पकड़ लिया, जैसे साँप चूहे को पकड़ लेता है। जिस हिरण्यकशिपु के चमड़ेपर वज्र की चोट से भी खरोंच नहीं आयी थी, वही अब उनके पंजे से निकलने के लिये जोर से छटपटा रहा था। भगवान ने सभा के दरवाजे पर ले जाकर उसे अपनी जाँघों पर गिरा लिया और खेल-खेल में अपने नखों से उसे उसी प्रकार फाड़ डाला, जैसे गरुड़ महाविषधर साँप को चीर डालते हैं। उस समय उनकी क्रोध से भरी विकराल आँखों की ओर देखा नहीं जाता था। वें अपनी लपलपाती हुई जीभ से फैले हुए मुँह के दोनों कोने चाट रहे थे। खूनके छींटों से उनका मुँह और गरदन के बाल लाल हो रहे थे। हाथी को मारकर गलेमें आँतों की माला पहने हुए मृगराज के समान उनकी शोभा हो रही थी। उन्होंने अपने तीखे नखों से हिरण्यकशिपु का कलेजा फाड़कर उसे जमीन पर पटक दिया। उस समय हजारों दैत्य-दानव हाथों में शस्त्र लेकर भगवानपर प्रहार करने के लिये आये। पर भगवान ने अपनी भुजारूपी सेना से, लातों से और नखरूपी शस्त्रों से चारों ओर खदेड़-खदेड़ कर उन्हे मार डाला।

उस समय भगवान नृसिंहके गरदन के बालों की फटकारसे बादल तितर-बितर होने लगे। उनके नेत्रों की ज्वाला से सूर्य आदि ग्रहों का तेज फीका पड़ गया। उनके श्वासके धक्केसे समुद्र क्षुब्ध हो गये। उनके सिंहनाद से भयभीत होकर दिग्गज चिग्घाड़ने लगे। उनके गरदन के बालों से टकराकर देवताओं के विमान अस्त-व्यस्त हो गये। स्वर्ग डगमगा गया। उनके पैरों की धमक से भूकम्प आ गया, वेग से पर्वत उड़ने लगे और उनके तेज की चकाचौंध से आकाश तथा दिशाओं का दिखना बंद हो गया। इस समय नृसिंहभगवान का सामना करनेवाला कोई दिखायी न पड़ता था। फिर भी उनका क्रोध अभी बढ़ता ही जा रहा था। वे हिरण्यकशिपु की राजसभा में ऊँचे सिंहासन पर जाकर विराज गये। उस समय उनके अत्यन्त तेजपूर्ण और क्रोध भरे भयङ्कर चेहरे को देखकर किसी का भी साहस न हुआ कि उनके पास जाकर उनकी सेवा करें।

जब स्वर्गकी देवियोंको यह शुभ समाचार मिला कि तीनों लोकोंके सिरकी पीड़ाका मूर्तिमान स्वरूप हिरण्यकशिपु युद्धमें भगवानके हाथों मार डाला गया, तब आनन्दके उल्लाससे उनके चेहरे खिल उठे। वे बार-बार भगवान पर पुष्पोंकी वर्षा करने लगीं। आकाश में विमानोंसे आये हुए भगवान के दर्शनार्थी देवताओं की भीड़ लग गयी। देवताओं के ढोल और नगारे बजने लगे। गन्धर्वराज गाने लगे, अप्सराएँ नाचने लगीं। इसी समय ब्रह्मा, इन्द्र, शङ्कर आदि देवता, ऋषि, पितर, सिद्ध, विद्याधर, महानाग, मनु, प्रजापति, गन्धर्व, अप्सराएँ, चारण, यक्ष, किम्पुरुष, वेताल, सिद्ध, किन्नर और सुनन्द-कुमुद आदि भगवान के सभी पार्षद उनके पास आये। उन लोगों ने सिर पर अञ्जलि बाँधकर सिंहासनपर विराजमान अत्यन्त तेजस्वी नृसिंहभगवान की थोड़ी दूरसे अलग-अलग स्तुति की।

- सातवा स्कंद (अध्याय - ८)

प्रह्लादजी के द्वारा नृसिंह भगवानकी स्तुति

इस प्रकार ब्रह्मा, शंकर आदि सभी देवगण नृसिंहभगवान के क्रोधावेश को शान्त न कर सके और न उनके पास जा सके। किसी को उनका ओर-छोर नहीं दिखता था। **देवताओं ने उन्हें शान्त करने के लिये स्वयं लक्ष्मीजी को भेजा। उन्होंने जाकर जब नृसिंहभगवान का वह महान अद्भुत रूप देखा, तब भयवश वे भी उनके पासतक न जा सकीं। उन्होंने ऐसा अनूठा रूप न कभी देखा और न सुना ही था। तब ब्रह्माजी ने अपने पास ही खड़े प्रह्लाद को यह कहकर भेजा कि 'बेटा! तुम्हारे पिता पर ही तो भगवान कुपित हुए थे। अब तुम्हीं उनके पास जाकर उन्हें शान्त करो'।** भगवान के परम प्रेमी प्रह्लाद 'जो आज्ञा' कहकर और धीरेसे भगवान्‌के पास जाकर हाथ जोड़ पृथ्वी पर साष्टाङ्ग लोट गये। नृसिंहभगवान ने देखा कि नन्हा-सा बालक मेरे चरणोंके पास पड़ा हुआ है। उनका हृदय दया से भर गया। उन्होंने प्रह्लाद को उठाकर उनके सिर पर अपना वह कर-कमल रख दिया, जो कालसर्प से भयभीत पुरुषों को अभयदान करनेवाला है। भगवान के करकमलों का स्पर्श होते ही उनके बचे-खुचे अशुभ संस्कार भी झड़ गये। तत्काल उन्हें परमात्मतत्त्व का साक्षात्कार हो गया। उन्होंने बड़े प्रेम और आनन्द में मग्न होकर भगवान् के चरणकमलों को अपने हृदय में धारण किया। उस समय उनका सारा शरीर पुलकित हो गया, हृदय में प्रेम की धारा प्रवाहित होने लगी और नेत्रों से आनन्दाश्रु झरने लगे। प्रह्लादजी भावपूर्ण हृदय और निर्निमेष नयनों से भगवान को देख रहे थे। भावसमाधि से स्वयं एकाग्र हुए मन के द्वारा उन्होंने भगवान के गुणों का चिन्तन करते हुए प्रेमगद्‌गद वाणी से स्तुति की।

प्रह्लादजीने कहा - ब्रह्मा आदि देवता, ऋषि-मुनि और सिद्ध पुरुषों की बुद्धि निरन्तर सत्त्वगुण में ही स्थित रहती है। फिर भी वे अपनी धारा-प्रवाह स्तुति और अपने विविध गुणों से आपको अबतक भी सन्तुष्ट नहीं कर सके। फिर मैं तो घोर असुर जाति में उत्पन्न हुआ हूँ! क्या आप मुझसे सन्तुष्ट हो सकते हैं? **मैं समझाता हूँ कि धन, कुलीनता, रूप, तप, विद्या, ओज, तेज, प्रभाव, बल, पौरुष, बुद्धि और योग - ये सभी गुण परमपुरुष भगवान को सन्तुष्ट करने में समर्थ नहीं हैं - परन्तु भक्ति से तो भगवान् गजेन्द्र पर भी सन्तुष्ट हो गये थे। मेरी समझ से इन बारह गुणों से युक्त ब्राह्मण भी यदि भगवान् कमलनाभ के चरण-कमलों से विमुख हो तो उससे वह चाण्डाल श्रेष्ठ है, जिसने अपने मन, वचन, कर्म, धन और प्राण भगवान के चरणों में समर्पित कर रक्खे है; क्योंकि वह चाण्डाल तो अपने कुल तक को पवित्र कर देता है।** और बड़प्पन का अभिमान रखनेवाला वह ब्राह्मण अपने को भी पवित्र नहीं कर सकता। सर्वशक्तिमान् प्रभु अपने स्वरूप के साक्षात्कार से ही परिपूर्ण हैं। उन्हें अपने लिये क्षुद्र पुरुषों से पूजा ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है। वे करुणावश ही भोले भक्तों के हित के लिये उनके द्वारा की हुई पूजा स्वीकार कर लेते हैं। जैसे अपने मुख का सौन्दर्य दर्पण में दीखनेवाले प्रतिबिम्ब को भी सुन्दर बना देता है, वैसे ही भक्त भगवान के प्रति जो-जो सम्मान प्रकट करता है, वह उसे ही प्राप्त होता है। **इसलिये सर्वथा अयोग्य और अनधिकारी होनेपर भी मैं बिना किसी शङ्का के अपनी बुद्धि के अनुसार सब प्रकार से भगवान की महिमाका वर्णन कर रहा हूँ। इस महिमा के गान का ही ऐसा प्रभाव है कि अविद्यावश संसार-चक्रमें पड़ा हुआ जीव तत्काल पवित्र हो जाता है।**

भगवन! आप सत्त्वगुणके आश्रय हैं। ये ब्रह्मा आदि सभी देवता आप के आज्ञाकारी भक्त हैं। ये हम दैत्योंकी तरह आप से द्वेष नहीं करते। प्रभो! आप बड़े-बड़े सुन्दर-सुन्दर अवतार ग्रहण करके इस जगत के कल्याण एवं अभ्युदय के लिये तथा उसे आत्मानन्द की प्राप्ति कराने के लिये अनेकों प्रकार की

लीलाएँ करते हैं। जिस असुर को मारने के लिये आपने क्रोध किया था, वह मारा जा चुका। अब आप अपना क्रोध शान्त कीजिये। जैसे बिच्छू और साँप की मृत्यु से सज्जन भी सुखी ही होते हैं, वैसे ही इस दैत्य के संहारसे सभी लोगों को बड़ा सुख मिला है। अब सब आपके शान्त स्वरूपके दर्शनकी बाट जोह रहे हैं। **नृसिंहदेव! भय से मुक्त होने के लिये भक्तजन आपके इस रूप का स्मरण करेंगे। परमात्मन! आपका मुख बड़ा भयावना है। आपकी जीभ लपलपा रही है। आँखें सूर्य के समान हैं। भौहें चढ़ी हुई हैं। बड़ी पैनी दाढ़ें हैं। आँतों की माला, खून से लथपथ गरदन के बाल, बर्छे की तरह सीधे खड़े कान और दिग्गजों को भी भयभीत कर देनेवाला सिंहनाद एवं शत्रुओं को फाड़ डालनेवाले आपके इन नखों को देखकर मैं तनिक भी भयभीत नहीं हुआ हूँ। दीनबन्धो! मैं भयभीत हूँ तो केवल इस असह्य और उग्र संसार-चक्र में पिसनेसे।** मैं अपने कर्मपाशों से बँधकर इन भयङ्कर जन्तुओं के बीचमें डाल दिया गया हूँ। मेरे स्वामी! आप प्रसन्न होकर मुझे कब अपने उन चरणकमलों में बुलायेंगे, जो समस्त जीवों की एकमात्र शरण और मोक्षस्वरूप हैं? अनन्त! मैं जिन-जिन योनियों में गया, उन सभी योनीयों में प्रिय के वियोग और अप्रिय के संयोग से होनेवाले शोक की आग में झुलसता रहा। उन दुखों को मिटान की जो दवा है, वह भी दु:खरूप ही है। मैं न जाने कब से अपने से अतिरिक्त वस्तुओं को आत्मा समझकर इधर-उधर भटक रहा हूँ। अब आप ऐसा साधन बतलाइये जिससे कि आपकी सेवा-भक्ति प्राप्त कर सकूँ। प्रभो! आप हमारे प्रिय हैं। अहैतुक हितैषी सुहृद हैं। आप ही वास्तव में सबके परमाराध्य हैं। मैं ब्रह्माजी के द्वारा गायी हुई आपकी लीला-कथाओं का गान करता हुआ बड़ी सुगमता से रागादि प्राकृत गुणों से मुक्त होकर इस संसार की कठिनाइयों को पार कर जाऊँगा; क्योंकि आपके चरणयुगलों में रहनेवाले भक्त परमहंस महात्माओं का सङ्ग तो मुझे मिलता ही रहेगा। भगवान नृसिंह! इस लोक में दुखी जीवोंका दु:ख मिटाने के लिये जो उपाय माना जाता है, वह आपके उपेक्षा करने पर एक क्षण के लिये ही होता है। यहाँतक कि माँ-बाप बालक की रक्षा नहीं कर सकते, औषधि रोग नहीं मिटा सकती और समुद्र में डूबते हुए को नौका नहीं बचा सकती। सत्त्वादि गुणों के कारण भिन्न-भिन्न स्वभाव के जितने भी ब्रह्मादि श्रेष्ठ और कालादि कनिष्ठ कर्ता हैं, उनको प्रेरित करनेवाले आप ही हैं।

पुरुष की अनुमति से काल के द्वारा गुणों में क्षोभ होने पर माया मन:प्रधान लिङ्गशरीर का निर्माण करती है। यह लिङ्गशरीर बलवान् कर्ममय एवं अनेक नाम-रूपों में आसक्त-छन्दोमय है। यही अविद्या के द्वारा कल्पित मन, दस इन्द्रिय और पाँच तन्मात्रा - इन सोलह विकाररूप अरों से युक्त संसार-चक्र है। जन्मरहित प्रभो! आपसे भिन्न रहकर ऐसा कौन पुरुष है, जो इस मनरूप संसार-चक्रको पार कर जाय? सर्वशक्तिमान् प्रभो! माया इस सोलह अरोंवाले संसार-चक्रमें डालकर ईखके समान मुझे पेर रही है। आप अपनी चैतन्यशक्ति से बुद्धि के समस्त गुणों को सर्वदा पराजित रखते हैं और कालरूप से सम्पूर्ण साध्य और साधनों को अपने अधीन रखते हैं। मैं आपकी शरण में आया हूँ, आप मुझे इससे बचाकर अपनी सन्निधि में खींच लीजिये। भगवन्! जिनके लिये संसारी लोग बड़े लालायित रहते हैं, स्वर्ग में मिलनेवाली समस्त लोकपालों की वह आयु लक्ष्मी और ऐश्वर्य मैंने खूब देख लिये। जिस समय मेरे पिता तनिक क्रोध करके हँसते थे और उससे उनकी भौहें थोड़ी टेढ़ीं हो जाती थीं, तब उन स्वर्ग की सम्पत्तियों के लिये कहीं ठिकाना नहीं रह जाता था, वे लुटती फिरती थीं। किन्तु आपने मेरे उन पिता को भी मार डाला। इसलिये मैं ब्रह्मालोक तक की आयु, लक्ष्मी, ऐश्वर्य और वे इन्द्रियभोग, जिन्हें संसार के प्राणी चाहा करते हैं, नहीं चाहता; क्योंकि मैं जानता हूँ कि अत्यन्त शक्तिशाली काल का रूप धारण करके आपने उन्हे ग्रस रक्खा है। इसलिये मुझे आप अपने दासों की सन्निधि में ले चलिये। **विषयभोग की बातें सुनने**

में ही अच्छी लगती है, वास्तव में वे मृगतृष्णा के जल के समान नितान्त असत्य हैं और यह शरीर भी, जिससे वे भोग भोगे जाते हैं, अगणित रोगों का उद्‌गम स्थान है। कहाँ वे मिथ्या विषयभोग और कहाँ यह रोगयुक्त शरीर! इन दोनोंकी क्षणभङ्गुरता जानकर भी मनुष्य इनसे विरक्त नहीं होता। वह कठिनाई से प्राप्त होनेवाले भोग के नन्हे-नन्हे मधुविन्दुओं से अपनी कामना की आग बुझाने की चेष्टा करता है! प्रभो! कहाँ तो इस तमोगुणी असुरवंश में रजोगुण से उत्पन्न हुआ मैं, और कहाँ आपकी अनन्त कृपा! धन्य है! आपने अपना परम प्रसादस्वरूप और सकलसन्तापहारी वह करकमल मेरे सिरपर रक्खा है, जिसे आपने ब्रह्मा, शङ्कर और लक्ष्मीजी के सिरपर भी कभी नहीं रक्खा। दूसरे संसारी जीवों के समान आपमें छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं है; क्योंकि आप सबके आत्मा और अकारण प्रेमी हैं। फिर भी कल्प-वृक्ष के समान आपका कृपा-प्रसाद भी सेवन-भजन से ही प्राप्त होता है। सेवा के अनुसार ही जीवों पर आपकी कृपाका उदय होता है, उसमें जातिगत उच्चता या नीचता कारण नहीं है। भगवन्! यह संसार एक ऐसा अँधेरा कुआँ है, जिसमें कालरूप सर्प डँसने के लिये सदा तैयार रहता है। विषय-भोगों की इच्छावाले पुरुष उसी में गिरे हुए हैं। मैं भी सङ्गवश उसके पीछे उसी में गिरने जा रहा था। परन्तु भगवन्! देवर्षि नारदने मुझे अपनाकर बचा लिया। तब भला, मैं आपके भक्तजनों की सेवा कैसे छोड़ सकता हूँ। अनन्त! जिस समय मेरे पिताने अन्याय करनेके लिये कमर कसकर हाथमें खड्ग ले लिया और वह कहने लगा कि 'यदि मेरे सिवा कोई और ईश्वर है तो तुझे बचा ले, मैं तेरा सिर काटता हूँ', उस समय आपने मेरे प्राणों की रक्षा की और मेरे पिता का वध किया।

भगवन! यह सम्पूर्ण जगत् एकमात्र आप ही हैं। क्योंकि इसके आदि में आप ही कारणरूप से थे, अन्त में आप ही अवधि के रूप में रहेंगे और बीच में इसकी प्रतीति के रूप में भी केवल आप ही हैं। आप अपनी माया से गुणों के परिणामस्वरूप इस जगत की सृष्टि करके इसमें पहले से विद्यमान रहने पर भी प्रवेश की लीला करते हैं और उन गुणों से युक्त होकर अनेक मालूम पड़ रहे हैं। भगवन्! यह जो कुछ कार्य-कारणके रूप में प्रतीत हो रहा है, वह सब आप ही हैं और इससे भिन्न भी आप ही हैं। अपने-पराये का भेद-भाव तो अर्थहीन शब्दोंकी माया है; क्योंकि जिससे जिसका जन्म, स्थिति, लय और प्रकाश होता है, वह उसका स्वरूप ही होता है - जैसे बीज और वृक्ष कारण और कार्य की दृष्टि से भिन्न-भिन्न हैं, तो भी गन्ध-तन्मात्र की दृष्टि से दोनों एक ही हैं।

भगवान! आप इस सम्पूर्ण विश्व को स्वयं ही अपने में समेटकर आत्मसुख का अनुभव करते हुए निष्क्रिय होकर प्रलयकालीन जल में शयन करते हैं। उस समय अपने स्वयंसिद्ध योग के द्वारा बाह्य दृष्टि को बंद कर आप अपने स्वरूप के प्रकाश में निद्रा को विलीन कर लेते हैं और तुरीय ब्रह्मपद में स्थित रहते हैं। उस समय आप न तो तमोगुण से ही युक्त होते और न तो विषयों को ही स्वीकार करते हैं। आप अपनी कालशक्ति से प्रकृति के गुणों को प्रेरित करते हैं, इसलिये यह ब्रह्माण्ड आपका ही शरीर है। पहले यह आप में ही लीन था। जब प्रलयकालीन जल के भीतर शेषशय्या पर शयन करनेवाले आपने योगनिद्रा की समाधि त्याग दी, तब वट के बीज से विशाल वृक्ष के समान आपकी नाभि से ब्रह्माण्डकमल उत्पन्न हुआ। उस पर सूक्ष्मदर्शी ब्रह्माजी प्रकट हुए। जब उन्हें कमल के सिवा और कुछ भी दिखायी न पड़ा, तब अपने में बीजरूपसे व्याप्त आपको वे न जान सके और आपको अपने से बाहर समझकर जल के भीतर घुसकर सौ वर्ष तक ढूँढ़ते रहे। परन्तु वहाँ उन्हें कुछ नहीं मिला। यह ठीक ही है, क्यों कि अङ्कुर उग आनेपर उसमें व्याप्त बीजको कोई बाहर अलग कैसे देख सकता है। ब्रह्मा को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे हार कर कमल पर

बैठ गये। बहुत समय बीतने पर तीव्र तपस्या करनेसे जब उनका हृदय शुद्ध हो गया, तब उन्हें भूत, इन्द्रिय और अन्त:करण रूप अपने शरीर में ही ओतप्रोत रूप से स्थित आपके सूक्ष्मरूप का साक्षात्कार हुआ - ठीक वैसे ही जैसे पृथ्वी में व्याप्त उसकी अति सूक्ष्म तन्मात्रा गन्ध का होता है।

विराट् पुरुष सहस्त्रों मुख, चरण, सिर, हाथ, जङ्घा, नासिका, मुख, कान, नेत्र, आभूषण और आयुधों से सम्पन्न था। चौदहों लोक उसके विभिन्न अङ्गों के रूप में शोभायमान थे। वह भगवान की एक लीलामयी मूर्ति थी। उसे देखकर ब्रह्माजी को बड़ा आनन्द हुआ। रजोगुण और तमोगुण रूप मधु और कैटभ नाम के दो बड़े बलवान् दैत्य थे। जब वे वेदों को चुराकर ले गये, तब आपने हयग्रीव-अवतार ग्रहण किया और उन दोनोंको मारकर सत्त्वगुणरूप श्रुतियाँ ब्रह्माजी को लौटा दीं। वह सत्त्वगुण ही आपका अत्यन्त प्रिय शरीर है - महात्मालोग इस प्रकार वर्णन करते हैं। पुरुषोत्तम! इस प्रकार आप मनुष्य, पशु-पक्षी, ऋषि, देवता और मत्स्य आदि अवतार लेकर लोकों का पालन तथा विश्व के द्रोहियोंका संहार करते हैं। इन अवतारों के द्वारा आप प्रत्येक युग में उसके धर्मों की रक्षा करते हैं। कलियुग में आप छिपकर गुप्तरूप से ही रहते हैं, इसीलिये आपका एक नाम 'त्रियुग' भी है।

वैकुण्ठनाथ! मन की बड़ी दुर्दशा है। वह पाप-वासनाओं से तो कलुषित है ही, स्वयं भी अत्यन्त दुष्ट है। वह प्राय: ही कामनाओं के कारण आतुर रहता है और हर्ष-शोक, भय एवं लोक-परलोक, धन, पत्नी, पुत्र आदिकी चिन्ताओं से व्याकुल रहता है। इसे आपकी लीला-कथाओंमें तो रस ही नहीं मिलता। इसके मारे मैं दीन हो रहा हूँ। ऐसे मनसे मैं आपके स्वरूपका चिन्तन कैसे करूँ? अच्युत! यह कभी न अघानेवाली जीभ मुझे स्वादिष्ट रसों की ओर खींचती रहती है। जननेन्द्रिय सुन्दरी स्त्री की ओर, त्वचा सुकोमल स्पर्श की ओर, पेट भोजन की ओर, कान मधुर सङ्गीत की ओर, नासिका भीनी-भीनी सुगन्ध की ओर और ये चपल नेत्र सौन्दर्य की ओर मुझे खींचते रहते हैं। इनके सिवा कर्मेन्द्रियाँ भी अपने-अपने विषयों की ओर ले जाने को जोर लगाती ही रहती हैं। मेरी तो वह दशा हो रही है, जैसे किसी पुरुषकी बहुत-सी पत्नियाँ उसे अपने-अपने शयनगृह में ले जाने के लिये चारों ओर से घसीट रही हों। इस प्रकार यह जीव अपने कर्मो के बन्धन में पड़कर इस संसार रूप वैतरणी नदी में गिरा हुआ है। जन्म से मृत्यु, मृत्यु से जन्म और दोनों के द्वारा कर्मभोग करते-करते यह भयभीत हो गया है। यह अपना है, यह पराया है - इस प्रकार के भेद-भाव से युक्त होकर किसी से मित्रता करता है तो किसी से शत्रुता। आप इस मूढ़ जीव-जाति की यह दुर्दशा देखकर करुणा से द्रवित हो जाइये। इस भव-नदी से सर्वदा पार रहनेवाले भगवन्! इन प्राणियों को भी अब पार लगा दीजिये। जगदगुरो! आप इस सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति तथा पालन करनेवाले हैं। ऐसी अवस्था में इन जीवों को इस भव-नदी के पार उतार देने में आपको क्या प्रयास है? दीनजनों के परमहितैषी प्रभो! भूले-भटके मूढ़ ही महान् पुरुषों के विशेष अनुग्रहपात्र होते हैं। हमें उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि हम आपके प्रियजनोंकी सेवा में लगे रहते हैं, इसलिये पार जानेकी हमें कभी चिन्ता ही नहीं होती। परमात्मन्! इस भव-वैतरणी से पार उतरना दूसरे लोगों के लिये अवश्य ही कठिन है, परन्तु मुझे तो इससे तनिक भी भय नहीं है। क्योंकि मेरा चित्त इस वैतरणी में नहीं, आपकी उन लीलाओं के गान में मग्न रहता है, जो स्वर्गीय अमृत को भी तिरस्कृत करनेवाली - परमामृतस्वरूप हैं। **मैं उन मूढ़ प्राणियोंके लिये शोक कर रहा हूँ, जो आपके गुणगानसे विमुख रहकर इन्द्रियों के विषयों का मायामय झूठा सुख प्राप्त करने के लिये अपने सिरपर सारे संसारका भार ढोते रहते हैं। मेरे स्वामी! बड़े-बड़े ऋषि-मुनि तो प्राय: अपनी मुक्ति के लिये निर्जन वन में जाकर मौनव्रत धारण कर लेते हैं। वे दूसरों की**

भलाई के लिये कोई विशेष प्रयत्न नहीं करते। परन्तु मेरी दशा तो दूसरी ही हो रही है। मै इन भूले हुए असहाय गरीबों को छोड़कर अकेला मुक्त होना नहीं चाहता और इन भटकते हुए प्राणियों के लिये आपके सिवा और कोई सहारा भी नहीं दिखायी पड़ता।

घर में फँसे हुए लोगों को जो मैथुन आदि का सुख मिलता है, वह अत्यन्त तुच्छ एवं दु:खरूप ही है - जैसे कोई दोनों हाथों से खुजला रहा हो तो उस खुजली में पहले उसे कुछ थोड़ा-सा सुख मालूम पड़ता है, परन्तु पीछे से दु:ख-ही-दु:ख होता है। किंतु ये भूले हुए अज्ञानी मनुष्य बहुत दु:ख भोगनेपर भी इन विषयों से अघाते नहीं। इसके विपरीत धीर पुरुष जैसे खुजलाहट को सह लेते हैं, वैसे ही कामादि वेगों को भी सह लेते हैं। सहने से ही उनका नाश होता है। **पुरुषोत्तम! मोक्ष के दस साधन प्रसिद्ध है - मौन, ब्रह्मचर्य, शास्त्र-श्रवण, तपस्या, स्वाध्याय, स्वधर्मपालन, युक्तियों से शास्त्रों की व्याख्या, एकान्तसेवन, जप और समाधि। परन्तु जिनकी इन्द्रियाँ वश में नहीं हैं, उनके लिये ये सब जीविका के साधन - व्यापारमात्र रह जाते हैं।** और दम्भियों के लिये तो जबतक उनकी पोल खुलती नहीं, तभी तक ये जीवननिर्वाह के साधन रहते हैं और भंडाफोड़ हो जाने पर वह भी नहीं। वेदों ने बीज और अङ्कुर के समान आपके दो रूप बताये हैं- कार्य और कारण। वास्तवमें आप प्राकृत रूप से रहित हैं। परन्तु इन कार्य और कारणरूपों को छोड़कर आपके ज्ञान का कोई और साधन भी नहीं है। काष्टमन्थन के द्वारा जिस प्रकार अग्नि प्रकट की जाती है, उसी प्रकार योगीजन भक्तियोग की साधना से आपको कार्य और कारण दोनों में ही ढूँढ़ निकालते हैं। क्योंकि वास्तवमें ये दोनों आपसे पृथक नहीं हैं, आपके स्वरूप ही हैं। **अनन्त प्रभो! वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल, पञ्च तन्मात्राएँ, प्राण, इन्द्रिय, मन, चित्त, अहङ्कार, सम्पूर्ण जगत् एवं सगुण और निर्गुण - सब कुछ केवल आप ही हैं। और तो क्या, मन और वाणीके द्वारा जो कुछ निरूपण किया गया है, वह सब आपसे पृथक नहीं है।** समग्र कीर्ति के आश्रय भगवन। ये सत्त्वादि गुण और इन गुणों के परिणाम महत्तत्त्वादि, देवता, मनुष्य एवं मन आदि कोई भी आपका स्वरूप जानने में समर्थ नहीं है; क्योकि ये सब आदि-अन्तवाले हैं और आप अनादि एवं अनन्त हैं। ऐसा विचार करके ज्ञानीजन शब्दों की माया से उपरत हो जाते हैं। **परम पूज्य! आपकी सेवाके छ: अङ्ग हैं - नमस्कार, स्तुति, समस्त कर्मोंका समर्पण, सेवा-पूजा, चरणकमलोंका चिन्तन और लीला-कथा का श्रवण। इस षडङ्ग-सेवाके बिना आपके चरणकमलोंकी भक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है? और भक्तिके बिना आपकी प्राप्ति कैसे होगी?**

इस प्रकार भक्त प्रह्लादने बड़े प्रेमसे प्रकृति और प्राकृत गुणों से रहित भगवान के स्वरूपभूत गुणों का वर्णन किया। इसके बाद वे भगवान के चरणों में सिर झुकाकर चुप हो गये। नृसिंहभगवान का क्रोध शान्त हो गया और वे बड़े प्रेम तथा प्रसन्नतासे बोले।

श्रीनृसिंहभगवान्ने कहा - परम कल्याणस्वरूप प्रह्लाद! तुम्हारा कल्याण हो। दैत्यश्रेष्ठ! मैं तुमपर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो अभिलाषा हो, मुझसे माँग लो। मैं जीवोंकी इच्छाओंको पूर्ण करनेवाला हूँ।

प्रह्लादजीने कहा - प्रभो! मैं जन्म से ही विषय-भोगों में आसक्त हूँ, अब मुझे इन वरों के द्वारा आप लुभाइये नहीं। मै उन भोगों के सङ्ग से डरकर, उनके द्वारा होनेवाली तीव्र वेदना का अनुभव कर उनसे छूटने की अभिलाषा से ही आपकी शरण में आया हूँ। भगवन्! मुझ में भक्त के लक्षण हैं या नहीं-यह जानने के लिये आपने अपने भक्तको वरदान माँगनेकी ओर प्रेरित किया है। ये विषय-भोग हृदय की गाँठ को और भी मजबूत करनेवाले तथा बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्करमें डालनेवाले हैं। जगदगुरों! परीक्षा

के सिवा ऐसा कहने का और कोई कारण नहीं दीखता; क्योकि आप परम दयालु है। (अपने भक्तको भोगों में फँसानेवाला वर कैसे दे सकते हैं?) **आपसे जो सेवक अपनी कामनाएँ पूर्ण करना चाहता है, वह सेवक नहीं; वह तो लेन-देन करनेवाला निरा बनिया है।** जो स्वामी से अपनी कामनाओं की पूर्ति चाहता है, वह सेवक नहीं; और जो सेवक से सेवा कराने के लिये, उसका स्वामी बनने के लिये उसकी कामनाएँ पूर्ण करता है, वह स्वामी नहीं। **मैं आपका निष्काम सेवक हूँ और आप मेरे निरपेक्ष स्वामी है। जैसे राजा और उसके सेवकों का प्रयोजनवश स्वामी-सेवक का सम्बन्ध रहता है, वैसा तो मेरा और आपका सम्बन्ध है नहीं।** मेरे वरदानिसिरोमणि स्वामी! **यदि आप मुझे मुँहमाँगा वर देना ही चाहते है तो यह वर दीजिये कि मेरे हृदयमें कभी किसी कामना का बीज अंकुरित हीन हो।** हृदय मे किसी कामना का बीज अंकुरित ही न हो। हृदय में किसी भी कामना के उदय होते ही इन्द्रिय, मन, प्राण, देह, धर्म, धैर्य, बुद्धि, लज्जा, श्री, तेज, स्मृति और सत्य - ये सब-के-सब नष्ट हो जाते है। कमलनयन! जिस समय मनुष्य अपने मनमें रहनेवाली कामनाओंका परित्याग कर देता है, उसी समय वह भगवत्स्वरूपको प्राप्त कर लेता है। भगवन! आपको नमस्कार है। आप सबके हृदय में विराजमान, उदारशिरोमणि स्वयं परब्रह्म परमात्मा हैं। अद्भुत नृसिंहरूपधारी श्रीहरि के चरणोंमें मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ।

श्रीनृसिंहभगवान्ने कहा - प्रह्लाद! तुम्हारे-जैसे मेरे एकान्तप्रेमी इस लोक अथवा परलोक की किसा भी वस्तु के लिये कभी कोई कामना नहीं करते। फिर भी अधिक नहीं, केवल एक मन्वन्तर तक मेरी प्रसन्नता के लिये तुम इस लोक में दैत्याधिपतियों के समस्त भोग स्वीकार कर लो। समस्त प्राणियों के समस्त भोग स्वीकार कर लो। समस्त प्राणियोंके हृदयमें यज्ञों के भोक्ता ईश्वरके रूप में मैं ही विराजमान हूँ। तुम अपने हृदय में मुझे देखते रहना और मेरी लीला-कथाएँ, जो तुम्हें अत्यन्त प्रिय हैं, सुनते रहना। समस्त कर्मों के द्वारा मेरी ही आराधना करना और इस प्रकार अपने प्रारब्ध-कर्म का क्षय कर देना। भोग के द्वारा पुण्यकर्मों के फल और निष्काम पुण्यकर्मों के द्वारा पाप का नाश करते हुए समय पर शरीर का त्याग करके समस्त बन्धनों से मुक्त होकर तुम मेरे पास आ जाओगे। देवलोक में भी लोग तुम्हारी विशुद्ध कीर्ति का गान करेंगे। **तुम्हारे द्वारा की हुई मेरी इस स्तुति का जो मनुष्य कीर्तन करेगा और साथ ही मेरा और तुम्हारा स्मरण भी करेगा, वह समय पर कर्मोंके बन्धनसे मुक्त हो जायगा।**

प्रह्लादजीने कहा- महेश्वर! आप वर देनेवालों के स्वामी हैं। आपसे मैं एक वर और माँगता हूँ। दीनबन्धु! यद्यपि आपकी दृष्टि पड़ते ही वे पवित्र हो चुके, फिर भी मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि उस जल्दी नाश न होनेवाले दुस्तर दोष से मेरे पिता शुद्ध हो जायँ।

श्रीनृसिंहभगवानने कहा - निष्पाप प्रह्लाद! तुम्हारे पिता स्वयं पवित्र होकर तर गये, इसकी तो बात ही क्या है, यदि उनकी इक्कीस पीढ़ियों के पितर होते तो उन सबके साथ भी वे तर जाते; क्योंकि तुम्हारे जैसा कुल को पवित्र करनेवाला पुत्र उनको प्राप्त हुआ। **मेरे शान्त, समदर्शी और सुख से सदाचार पालन करनेवाले प्रेमी भक्तजन जहाँ-जहाँ निवास करते हैं, वे स्थान चाहे कीकट ही क्यों न हों, पवित्र हो जाते हैं।** दैत्यराज! मेरे भक्तिभाव से जिनकी कामनाएँ नष्ट हो गयी हैं, वे सर्वत्र आत्मभाव हो जानेके कारण छोटे-बड़े किसी भी प्राणी को किसी भी प्रकार से कष्ट नहीं पहुँचाते। **संसार में जो लोग तुम्हारे अनुयायी होंगे, वे भी मेरे भक्त हो जायँगे। बेटा! तुम मेरे सभी भक्तों के आदर्श हो।**

- श्री मद्भागवतम् ७वाँ स्कंद - अध्याय ९,१०

प्रस्तुति : शिवकुमार लोहिया

इस्कान श्री धाम मायापुर में श्री नृसिंह देव का आगमन

(आत्म तत्व दासाधिकारी से वार्तालाप पर आधारित)

24 मार्च 1984 को रात्रि 12.20 मिनट पर अस्त्र शस्त्र एवं गोला बारूद के साथ 35 डाकुओं के एक दल ने श्री मायापुरचन्द्रोदय मंदिर पर आक्रमण कर दिया। उन लोगों ने भक्तों को तंग किया एवं गाली गलौज भी किया। सबसे अधिक दुःखद घटना तब घटी जब वे श्रील प्रभुपाद एवं श्री मती राधा रानी के विग्रह को उठाकर ले जाने का प्रयास करने लगे। निर्भय होकर भक्तों ने आक्रमणकारियों को ललकारा। श्रील प्रभुपाद एवं श्रीमती राधा रानी को ले जाना वे भला कैसे बर्दास्त कर सकते थे? उन पर गोलियाँ चलाई गई, कुछ डकैत मारे भी गए एवं उनका प्रयास विफल कर दिया गया।श्रील प्रभुपाद का उद्धार कर लिया गया, पर श्रीमती राधारानी का वह सुंदर रूप अब प्रधान वेदी की शोभा नहीं बढ़ा सकता था। इस घटना के कारण भक्तों के मन में उथल पुथल मच गई। व्यवस्था में संलग्न अधिकारी गण विशेष तौर पर इस मसले एवं समस्या का स्थाई समाधान चाहते थे। ऐसा पहली बार नहीं हुआ था कि मायापुर में भक्तों को हिंसा एवं हैरानी का सामना करना पड़ा हो। इस्कान मायापुर के सह निर्देशक भवनानंद दास ने सुझाव दिया कि मंदिर में श्री नृसिंह देव की प्रतिष्ठा की जाय। जब डकैतों ने योगपीठ में भक्तों को धमकी दीयाथा, तो श्रील भक्ति विनोद ठाकुर एवं उनके सुपुत्र श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती ठाकुर ने शीध्र ही श्री लक्ष्मी नृसिंह देव की प्रतिष्ठा कर दी थी। उसके बाद वहाँ पर कभी कोई उपद्रव नहीं हुआ। मायापुर के कुछ अन्य भक्त उनका इस प्रकार अनुसरण करने के आग्रही नहीं थे। पुजारी को नैष्ठिक ब्रह्मचारी (जन्म से ब्रह्मचारी) होना होगा एवं भगवान नृसिंह देव की पूजा कठोर निष्ठा के साथ करनी होगी। उनकी पूजा करने कौन तैयार होगा? इन सब बाधाओं के बावजूद भगवान नृसिंह देव को मायापुर में लाने के लिए भवनानंद दास उत्साहित थे। उन्होंने भक्ति सिद्धांत दास एवं मुझे कुछ रेखाचित्र बनाने के लिए कहा। एक दिन स्वतःस्फूर्त रूप से उन्होंने कहा कि विग्रह के पैर कूदने के लिए तैयार की मुद्रा में मुड़े हुए होने चाहिए। ऐसा लगना चाहिए कि वे उग्र रूप से चारों तरफ़ देख रहे हैं। उनकी अंगुलियाँ मुड़ी हुए होने चाहिए, उनके सिर से लपट निकलती हुआई प्रतीत होनी चाहिए। इस मुद्रा में मैंने विग्रह का रेखाचित्र बनाया।वह रेखाचित्र भक्तों को पसंद आया एवं पंकजआंघ्री दास ने उनकी पूजा - अर्चना करने की

स्वीकृति दे दी। कलकत्ता के एक धनी भक्त राधापद दास ने मूर्ति निर्माण एवं प्रतिष्ठा के ख़र्च को वहन करना स्वीकार किया। ऐसा लग रहा था कि इस्कान मायापुर में भगवान नृसिंह देव के आविर्बाव की घटना साधारण एवं सहज होगी। राधा पद दास ने शीघ्र ही 1 लाख 30 हज़ार दे दिए। ऐसा सोचा गया कि तीन माह के अंदर विग्रह स्थापना हो जायगी। सारी व्यवस्था करने मैं दक्षिण भारत की यात्रा पर निकल पड़ा। कृष्ण की असीम कृपा से मैंने शीघ्र ही एक विख्यात स्थपति (मूर्तिकार) को खोज निकाला। एक स्थपति केवल मूर्ति का निर्माण ही नहीं करता, बल्कि मंदिर वास्तुकला एवं निर्माण में भी पटु होता है। पहले पहल तो उसने काफ़ी रुचि दिखाई,पर जैसे ही मैंने कहा कि हम उग्र नृसिंह की भंगिमा वाली मूर्ति चाहतें हैं, उसने ऐसी मूर्ति बनाने से संपूर्ण रूप से मना कर दिया। मैनें अन्य कई विग्रह मूर्तिकारों से मुलाक़ात की। सभी ने एक ही उत्तर दिया - नहीं। मैं मायापुर से दक्षिण भारत कई बार गया, छह महीने बीत गए थे। पर भगवान नृसिंह देव अपने विग्रह रूप में अभी तक प्रकट नहीं हुए थे।

राधा पद दास की यह तीव्र इच्छा थी कि मायापुर में भगवान नृसिंह देव की स्थापना हो जाय। उन्होंने मुझे प्रथम स्थपति से मिलकर उनसे पुनः आवेदन करने के लिए कहा। इस बार कुछ नर्म रुख़ अपनाते हुए स्थपति ने शिल्पशास्त्र (मूर्ति निर्माण एवं मंदिर वास्तुकला पर एक वैदिक शास्त्र ग्रंथ) के एक अध्याय को पढ़ कर सुनाया। वह ऊँची आवाज़ में कुछ श्लोकों को पढ़ा,जिसमें भगवान नृसिंह देव के संबंध में विवरण दिया गया था। अग्निशिखा रूपी वेश,संधान करती निगाहें एवं खंभे से निकल कर कूदने के लिए घुटने मोड़कर एक पैर को सामने की ओर निकाले हुए उनकी मुद्रा के बारे में इन श्लोकों में वर्णन किया गया था। जब वे पढ़ रहे थे, उस समय मैं अचंभित रह गया। ठीक यही मुद्रा हम भी चाहते थे। मैंने उन्हें मेरे पास वाली रेखाचित्र दिखाई। वे भी प्रभावित हो गए एवं शास्त्र के वर्णन के अनुसार एक रूपरेखा बनाने के लिए राज़ी हुए, जिसके आधार पर मूर्ति की ख़ुदाई होगी। साथ ही साथ उन्होंने यह भी कहा कि यह काम वे स्वयं नहीं करेगें। इस काम में उन्हें एक सप्ताह लगा। वह रूपरेखा वाली छवि काफ़ी प्रभावशाली थी। मैं मायापुर लौट आया एवं मंदिर अधिकारियों को वह रूपरेखा वाली छवि दिखाया। सभी चाहते थे कि वही स्थपति मूर्ति का निर्माण करे।इस काम को स्वयं करने के लिए उसे राज़ी करने के लिए मुझे एक बार फिर दक्षिण भारत भेजा गया।

मैं सीधा स्थपति के घर गया। मैं काफ़ी उव्दिग्न था। भगवान नृसिंह देव से प्रार्थना करने के सिवा मैं कर ही क्या सकता था ताकि वे कृपापूर्वक श्रीमायापुर धाम में हमारे मंदिर में शीघ्र प्रकट हों। स्थपति को मैंने दो वाक्य ही बोले थे कि वे बीच में ही उस विग्रह को स्वयं बनाना स्वीकार कर लिया। इस निर्णय के पीछे एक रोचक कहानी है। उस स्थपति ने अपने गुरु कांचीपुरम् के शंकराचार्य को हमारे कार्य के बारे में बताया था। उनके गुरु ने उन्हें तुरंत ही कह दिया था - यह काम मत करो। तुम्हारा परिवार नष्ट हो जायगा। पर कुछ क्षण पश्चात ही उन्होंने पूछा - इस काम के लिए तुम्हें किसने कहा है। जब उन्हें यह पता चला कि नवव्दीप के हरे कृष्णा वाले चाहते हैं, तो वे चिंतित हो गए। उन्होंने पूछा - वे उग्र नृसिंह देव चाहते हैं ,क्या उन्हें उग्र नृसिंह देव के विग्रह निर्माण एवं स्थापना में निहित जटिलता के विषय में जानकारी है? तीन हज़ार वर्ष पहले ऐसे विग्रह सिर्फ़ बहुत ही उन्नत मूर्तिकार ही ख़ुदाई करते थे। मैसूर जाने के रास्ते में एक स्थान है, जहाँ पर उग्र नृसिंह देव की स्थापना की गई है। अपने गोद में लेकर राक्षस हिरण्यकशिपु के तन को विदीर्ण करने के कारण उसकी आतड़ियाँ पूरे बेदी पर फैली हुई हैं। एक समय वहाँ पूजा अर्चना उच्च स्तर की थी। प्रतिदिन वहाँ हाथी की सवारी

निकलती थी एवं उत्सव होता था। पर धीरे धीरे पूजा अर्चना का स्तर गिरता गया। आज वह स्थान जीर्ण शीर्ण अवस्था में है। पूरा गाँव निर्जन हो गया है। वे लोग भी अपने यहाँ ऐसा ही चाहते हैं?"

स्थपति ने उत्तर दिया - "वे लोग अपने जिद्द पर अड़े हैं। वे विग्रह के बारे में बात करने बार बार मेरे पास आते हैं। ऐसा लगता है कि उन्हें डकैतों की कोई समस्या है।" विग्रह का रेखाचित्र अपने गुरु के हाथ में देते हुए उन्होंने कहा - "वे ऐसा विग्रह चाहते हैं"। गुरूजी ने चित्र देखकर कहा - "यह तो उग्र श्रेणी का है। इस विशेष भाव के विग्रह को स्थानु विग्रह कहा जाता है। इस पृथ्वी पर ऐसा कहीं भी नहीं है। स्वर्गीय देवता गण इस भाव की पूजा नहीं करते। हाँ, यह विग्रह उग्र श्रेणी का है।उग्र का अर्थ भयकंर, अति क्रुद्ध। इस श्रेणी के नौ प्रकार के भाव हैं। वे सभी भयकंर हैं। वे लोग जो चाहते हैं, वह स्थानु नृसिंह है - खंभे से निकलते हुए। नहीं, ऐसा विग्रह मत बनाओ। यह तुम्हारे लिए मंगलमय नहीं होगा। इस बार में मैं तुमसे बाद में बात करुंगा।"

कुछ रात्रि के बाद स्थपति को एक स्वप्न आया। स्वप्न में आकर गुरूदेव ने कहा - "उनके लिए तुम स्थानु नृसिंह बना सकते हो।" दूसरे दिन प्रातः ही उसे कांचीपुरम से एक पत्र प्राप्त हुआ। यह पत्र शंकराचार्यजी ने भेजा था।इसमें मंदिर में कार्य के विषय में निर्देश दिये गए थे। नीचे एक पंक्ति में लिखा हुआ था - इस्कान के लिए तुम स्थानु नृसिंह खुदाई कर सकते हो।

स्थपति ने मुझे यह पत्र दिखाते हुए कहा - "मुझे मेरे गुरूदेव का आशीर्वाद प्राप्त हो गया है, अब मैं आपके विग्रह की ख़ुदाई करुंगा।" मैं खुशी के मारे झूमने लगा। मैने उसे अग्रिम राशि बतौर कुछ रुपये दिए एवं पूछा कि कितने दिन लगेंगे? उन्होंने कहा - "छह महीने के भीतर मूर्ति स्थापना के लिए तैयार हो जायगा।" मैं मायापुर लौट आया।

चार महीने के बाद मैंने दक्षिण भारत जाने का निश्चय किया ताकि नृसिंह देव के पूजा अर्चना के लिए आवश्यक पीतल के भारी भारी सामग्री ख़रीद लिए जायेंगे एवं तत्पश्चात् मूर्ति को लेकर लौट आयेंगे। स्थपति से मिलने के पहले तक यह यात्रा सुव्यवस्थित एवं निर्विघ्न रूप से संपन्न हो रही थी। मैने उन्हें बताया कि पूजा अर्चना के लिए आवश्यक सभी सामग्रियाँ ख़रीदी जा चुकी हैं, अब मैं मूर्ति को लेने आया हूँ। मेरी तरफ़ वे इस तरह देखने लगे जैसेकि मैंने अपना होश खो दिया हो। उन्होंने कहा - "कौन सा विग्रह? अभी तक तो मुझे उपयुक्त पत्थर ही नहीं मिल पाया है।" मैं उनकी बात सुनकर हतप्रभ हो गया। मैंने कहा - "पर आपने तो कहा था कि छह महीने के अंदर कार्य पूरा हो जायगा।" उन्होंने कहा - "मैं अपना वादा निभाऊंगा। उपयुक्त पत्थर मिलने के छह महीने के अंदर मूर्ति स्थापना के लिये तैयार हो जायगा।" उनके उत्तर का स्वर काफ़ी दृढ था। पर मैं इस विलंब को स्वीकार नहीं कर पा रहा था। हतोत्साहित होते हुए मैंने उन्हें ललकारा - पूरे दक्षिण भारत में पत्थरों के बड़े बड़े खंड पाए जाते हैं। क्या समस्या है?

उन्होनें मेरी तरफ़ कुछ इस प्रकार निगाहें डालि जैसे एक शिक्षक एक मंद विद्यार्थी की ओर देखता है। मुझे समझाते हुए कहा - "मैं पीसने वाला कोई ऊखल नहीं बना रहा हूँ। मैं एक विग्रह बनाऊँगा। शास्त्र हमें बतातें हैं कि विष्णु विग्रह बनाने के लिए उन्हीं शिलाखंडों का प्रयोग किया जा सकता है, जिनमें जीवन है। जब आप शिलाखंडों को सात स्थानों पर आघात करते हैं एवं प्रत्येक स्थान पर शास्त्रों के अनरूप ही स्वर निकलने पर ही उस उपयुक्त शिलाखंड का प्रयोग किया जा सकता है। दूसरी एक और पद्धति है जिसके द्वारा जाना जा सकता है कि शिलाखंड जीवंत है या नहीं। एक प्रकार का कीड़ा पाया

जाता है जोकि स्फटिक शिला खाते हैं। ये कीड़े अगर एक छोर से खाते खाते दूसरी छोर से निकल जाये एवं अपने पीछे छिद्र की संपूर्ण लकीर छोड़ दे तो उस शिला के जीवंत होने में कोई संदेह नहीं रहता। केवल जीवंत शिला में ही भाव प्रकट हो सकते हैं। ऐसे शिलाखंड से ही मैं आपके नृसिंह देव की ख़ुदाई कर सकता हूँ। ऐसे शिला से कविता के स्वर निकलते हैं। ऐसे शिला से ही सारे भाव भंगिमा संपूर्ण रूप से सुंदर एवं पारदर्शी होंगे। कृपया धैर्य धारण करें। मैं सच्चे मन से इस कार्य के लिये छह फुट के शिलाखंड की खोज में लगा हुआ हूँ।"

मैं चमत्कृत के साथ साथ उव्दिग्न भी था। मायापुर में भक्तगण विग्रह के तत्काल आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं उन्हें जीवंत शिलाखंड की खोज के बारे में कैसे समझाऊँगा? हो सकता है, वे लोग नृसिंहदेव को संगमरमर में बनाने की सोचें। वातावरण को थोड़ा सहज करने के लिए मैंने स्थपति से प्रह्लाद की मूर्ति के विषय में चर्चा प्रारम्भ करना चाहा - "मुझे क्षमा कीजिएगा, पिछली बार मैं आपको यह बताना भूल गया कि हमें प्रह्लाद की एक मूर्ति की भी आवश्यकता है। हमलोग प्रह्लाद - नृसिहदेव की पूजा अर्चना करना चाहते हैं, आपके क्या विचार हैं?"

"मुझे नहीं लगता कि यह संभव होगा" - स्थपति ने स्पष्ट रुप से उत्तर दिया। अवाक् होकर मैं उनकी ओर देखने लगा। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या कहूँ? वे मुस्कराये एवं कहने लगे - "आप सब कुछ शास्त्र के अनुसार बनवाना चाहते हैं। आपके नृसिंहदेव चार फुट के होंगे। तुलनात्मक दृष्टि से आपके प्रह्लाद महाराज एक जीवाणु के आकार के होगें।" मैंने कहा - "लेकिन हम प्रह्लाद महाराज एक फुट का चाहते हैं।"

"ठीक है",- स्थपति ने उत्तर दिया - "लेकिन इसका मतलब यह हुआ कि आपके नृसिंहदेव को 120 फुट का होना होगा।" प्रह्लाद महाराज के रुप के बार में हमलोगों में बहुत तर्क विर्तक हुआ। अंतमें स्थपति ने हार मानते हुये एक फुट ऊँचा प्रह्लाद महाराज बनाने के लिए हामी भर दी। मायापुर लौटने पर कम से कम एक सकारात्मक सूचना तो दे पाऊँगा।

दो माह बाद मैं दक्षिण भारत लौट आया। इस बीच काम में कोई भी अग्रगति नही हुई। हर तीस से चालीस दिन के अंतराल में मैं दक्षिण भारत की यात्रा करता रहा। अंत में हमारा शिलाखंड मिल गया एवं स्थपति में सम्पूर्ण परिवर्तन आ गया। एक सप्ताह तक शायद ही कोई क्षण उन्होंने घर में बिताये होंगे। घंटा दर घंटा, दिनों पर दिन वे शिला को निहारते हुये बैठे रहते। उनके हाथ में चाक था पर उन्होंने उसका उपयोग नहीं किया। शिलाखंड से अनावश्यक पत्थर हटाने के सिवाय अपने श्रमिकों को और कुछ करने की अनुमति नहीं दी। अगली बार मैं उनके यहां गया तो पाया कि उन्होंने शिलाखंड पर बस एक रेखांकन किया है। मैं चिंतित हो गया। मायापुर के व्यवस्थापकगण सब अधीर हो रहे थे। मैंने हतास होकर उनसे पूछा - क्या आपको विश्वास है कि छह महिने के अंदर विग्रह का काम सम्पूर्ण हो जायगा? "उन्होंने उत्तर दिया - आप चिंता न करें। काम हो जायेगा।" मैं मायापुर लौट आया। पर विग्रह के विवरण के बारे में चर्चा करने के लिये तत्काल ही दक्षिण भारत भेज दिया गया। स्थपति को मैंने पूर्ण मनोयोग एवं समर्पण भाव से पूर्ति के आकार की खुदाई करते पाया। उस समय तक शिला में आकार दिखने लगे थे।स्थपति ने विग्रह के हाथों पर काम करना प्रारम्भ कर दिया था। सारे भाव भंगिमा एवं बनावट सूक्ष्म एवं परिष्कृत थे। मैं अत्यंत आनंदित एवं प्रभावित था। विग्रह को सम्पूर्ण

करने मे स्थपति को एक वर्ष लग गये। काम पूरा होने के तुरंत बाद ही उन्होंने मुझे सूचित नहीं किया। वरन् कुछ दिन के लिये वह अपने मित्र के यहाँ रहने चला गया। उस समय वर्षा ऋतु थी, कम व्यक्ति ही मिलने आते थे। अपने फूस के घर में नृसिंहदेव को ताला बंद करके वह चला गया। दो दिन बाद ही उसके पडोसी ने उसके पास दौड़े दौड़े आकर सूचित किया कि उसके घर मे आग लग गई है।

उस समय तेज बारिश हो रही थी और सब कुछ भीगा हुआ था। फिर भी नारियल के सूखे रेशे से बने उसके छत में आग लग गई थी।भागते भागते आकर उसने पाया कि घर जलकर राख हो चुका था लेकिन नृसिंहदेव के विग्रह को कोई क्षति नहीं पहुची। शीघ्र ही उन्होंने मुझे फोन किया - कृपया आकर अपने विग्रह को ले जाइये। वे सब कुछ जला रहे हैं। उन्होने यह बता दिया है कि वे शीघ्रापिशीघ्र यहां से जाना चाहते हैं। उत्साह एवं उमंग से भरा मैंने दक्षिण भारत की यात्रा की। वहाँ पर एक लारी भाड़े पर कर आधे लारी को बालू से भरवा दिया। यह सोचते हुए कि अब सब कुछ सरलता से हो जायगा, मैं स्थपति के यहां पहुंचा। मुर्खतावश मैं यह भूल गया कि नृसिंहदेव का एक वजनदार व्यक्तित्व है। उनका एक टन वजन था। उनके कार्यशाला से लारी तक विग्रह को लाने में तीन घंटे लग गये। विभिन्न राज्यों में सुरक्षित यात्रा करने के लिये पुलिस की मंजूरी की आवश्यकता थी। साथ ही साथ बिक्री कर विभाग, पुरातत्व निर्देशक एवं कला भवन, तामिलनाड के अनुमोदन पत्र की आवश्यकता थी।

सभी अधिकारीगण आवश्यक अनुमोदन से पहले विग्रह को स्वयं देखना चाहते थे। भगवान नृसिंहदेव के दर्शन करने के बाद वे सभी स्वतः ही तत्परता के साथ सहयोग करने लगे। चौबीस घंटे के अंदर सभी आवश्यक कागजात मेरे हाथ में आ गये। भारत के सरकारी कार्यालयों में स्थित जटिलताओं के मध्य यह एक चमत्कारिक घटना थी। मायापुर तक की यात्रा शांतिपूर्ण एवं निर्विघ्न रही। सही माने में हमारे रक्षक हमारे साथ थे।

साधारतः स्थापना समारोह वाले दिन स्थपति गर्भगृह में जाकर विग्रह के आँखों की खुदाई करता है। इस प्रक्रिया को नेत्र निमिलनम (आँखों को खोलना) कहा जाता है। यह एक अति विशिष्ट घटना थी कि हमारे नृसिंहदेव के स्थपति ने पहले से ही आँखों की खुदाई कर दी थी। उन्होंने न सिर्फ आँखों की खुदाई कर दी थी बल्कि प्राण प्रप्तिष्ठा भी सम्पन्न कर दी थी। साथ ही साथ सुक्ष्म रुप से पूजा और आरती भी कर दी थी। मुझे यह पूरा विश्वास है कि इसी कारण से सारे कागजात इतने सहयोग की भावना के साथ तत्परता से बन गये थे एवं परमेश्वर भगवान को लाने में इतनी सहजता एवं सरलता रही। वे पहले से ही उपस्थित थे। भगवान नृसिंहदेव को भला ना कहने का साहस किसमें हो सकता है?

भगवान नृसिंहदेव के स्थापना का कार्य बहुत ही सरल रहा एवं तीन दिन - 28 से 30 जुलाई 1986 तक चला। मुझे स्मरण है - मैं संशकित महसूस कर रहा था कि स्थापना समारोह अति सरल था। कांचीपुरम के शंकरचार्यजी के गम्भीर चेतावनी की छाप मेरे मन में अंकित थी। किंतु उक्त अवसर पर उच्च स्वर में हो रहे जीवंत कीर्तन से मैं प्रसन्न था। कलियुग का एकमात्र यथार्थ ऐश्वर्य संकीर्तन यज्ञ ही पूरे समारोह में प्रधानता के साथ सम्पन्न हुआ था। फलस्वरुप मैं सजग एवं संतुष्ट था। संकीर्तन आंदोलन रक्षक भगवान नृसिंहदेव श्री मायापुर चंद्रोदय मंदिर में अंततोगत्वा स्वयं को प्रकट कर दिये थे। जय श्री नरसिंहदेव भगवान की - जय, प्रह्लाद महाराज की जय।

भगवान नृसिंहदेव तत्क्षण फल प्रदान करते हैं

- पंकजआंघ्री दास

ऐसा पाया गया है कि साधारतः लोग कहानियां सुनना पसंद करते हैं। इस कारण भी वैदिक शास्त्र जैसे महाभारत, रामायण एवं पुराण जैसे महाकाव्य शनैः शनैः कहानियों के रुप में प्रस्तुत किये जाते हैं। जब ये कहानियां भगवान एवं उनके भक्त के क्रिया-कलापों के बारे में होते हैं तो उन्हे लीला कहा जाता है। मायापुर में भगवान नृसिंहदेव का पुजारी होने के कारण मुझे उनसे संबधित कछ कहानियों को लिखने के लिये कहा गया है। परन्तु शास्त्र की तरह इन कहानियों का कोई अनुमोदन अथवा स्वीकृति नहीं है। ये कहानियां स्वयं उन भक्तों के व्दारा बताई गई हैं, जिनके जीवन में ये घटनाएं घटी हैं। किसी भी घटना में कोई साक्षी या बाहरी अनुमोदन उपस्थित नहीं है।

हांलाकि मैं दूसरों के चमत्कारिक अनुभवों को सहज में ही सत्य नहीं मान सकता, इन दिनों बहुत सी ऐसी घटनायें घटने लगी, जिन्होंने मेरा ध्यान आर्कषित किया है। अन्य शब्दों में कहूँ तो - उनके बारे में सजग हुए बिना मैं अपने को रोक नहीं पाया। उदाहरणस्वरुप, गौर पुर्णिमा अवसर पर एकत्रित भीड़ में से मैंने एक माताजी को बुलाकर महिलाओं में भगवान के चरणामृत को बाँटने के लिए कहा। बाद में चरणामृत के बर्तन को वापिस देते समय उसने बताया कि भगवान नृसिंहदेव अत्यन्त दयालु हैं एवं इतनी शीघ्रता से फल प्रदान करते हैं।

“आज मैं प्रार्थना कर रही थी कि मैं उनकी कोई सीधी सेवा कर पाऊँ एवं अभी आपने मुझे यह सेवा प्रदान कर दी।” हाँ - मैंने कहा - “धाम में इच्छाएं शीघ्रता से पूरी होती हैं। देखो, जिस दिन तुमने इच्छा की उसी दिन पूर्ण हो गई।” उसने उत्तर दिया - “उसी दिन नहीं, उसी क्षण। जिस क्षण उनकी सेवा करने की मैंने इच्छा की, उसी क्षण आपने मुझे बुला लिया।” “वाह, यह तो आश्चर्यजनक घटना है” -मैने स्वीकार किया - “क्या तुमने सुना है -किस प्रकार आत्मरति माताजी के आँखों की समस्या का उसी क्षण समाधान हो गया जिस क्षण भगवान नृसिंह देव के पहले वाले नेत्र लगा दिये गए।” वास्तव में एक भक्त ने ये नेत्र का एक जोड़ा प्रदान किया था। उन्हें बदल कर फिर से पुराने नेत्र लगा दिये गए। उसने बताया - “हाँ, वास्तव में भगवान नृसिंह देव ने जिसे कहा था, मैं उसीके मकान में रहती थी। आपको मालूम है, उस रात इतनी ऊर्जा उत्पन्न

हुई थी,कि रात भर हमलोग सो नहीं पाये थे।" कुछ ही दिनों के बाद एक दूसरे भक्त ने बताया, किस प्रकार भगवान नृसिंह देव ने उनकी मदद की। मैं काफ़ी कष्ट भोग रहा था। भगवान नृसिंह देव के मण्डप के सामने खंभे के सहारे के बिना खड़ा भी नहीं रह पा रहा था। मैने प्रार्थना की - कृपया मेरी सहायता करें। मुझे इस कष्ट दायक पीड़ा से मुक्त करें, ताकि मैं आपकी पूर्ण रूप से सेवा कर सकूँ। तत्पश्चात् मैंने यह महसूस किया कि पीड़ा ऊपर की ओर उठकर शरीर से बाहर निकल रही है। इस प्रकार मेरा कष्ट चला गया।

जिस समय मैं यह सुन रहा था, मैंने ध्यान दिया कि एक अन्य भक्त भगवान के दर्शन के लिए आया था। उसी दिन प्रातःकाल इन्हीं माताजी ने मुझे बताया था कि विगत दो सप्ताह से वह एक समस्या से ग्रस्त थी, जिसके फलस्वरुप उसका पूरा शरीर विकार युक्त हो गया। इधर उसे आसाम में विग्रह रंग करने का काम मिला हुआ था एवं उसके पास हवाई जहाज का टिकट भी था। पर अपनी समस्या के कारण वह नहीं जा पा रही थी। उन्होंने मुझसे सुझाव माँगा कि वह क्या करे? उनके पास जाकर मैंने उनसे कहा - "माताजी, भगवान नृसिंह तुंरत वरदान देते हैं। अपनी समस्या के लिये आप उनसे प्रार्थना क्यों नहीं करते।" दूसरे दिन जब प्रातः उन्होने मुझे देखा तो कहा - "आपके सुझाव के लिये बहुत बहुत धन्यवाद। कल जब मैं मंदिर से घर पहुँची, मेरी समस्या पूर्ण रूप से समाप्त हो चुकी थी।" कुछ दिनों के बाद एक अन्य माताजी ने पुजारी धर में आकर एक स्वप्न के बारे में बताया, जिसमें भगवान नृसिंह ठीक एक पिता के भाँति उसके साथ घूमे एवं वार्तालाप किया। जब उसने पूछा कि किस प्रकार से वह उनकी सेवा करे, तो भगवान ने कहा वह आम का भोग लगाए।

क़रीब एक सप्ताह बाद वह महिला जब भोग के लिए आम लेकर आई, जन निवास प्रभु दूसरे पुजारियों से कहने लगे कि वह महिला कितनी भाग्यशाली है। भगवान नृसिंह स्वयं उसके स्वप्न में आकर उससे बातें की, उसके साथ साथ चलते चलते उसका हाथ थामे रखा एवं व्यक्तिगत रूप से उसे निर्देश दिया। उन माताजी ने कहा - "मेंने पहले जो बताया था, वास्तव में उससे भी अधिक बातें उस स्वप्न में हुई थीं। भगवान नृसिंह ने मुझे यह भी कहा था कि मेरा पुजारी मुझे बहुत प्रिय है। मैं उसे अपने साथ ले जाऊँगा। मैंने डरकर उनसे कहा - 'नहीं, कृपया ऐसा मत कीजिए। हमलोग उन्हें यहीं रखना चाहते हैं। नहीं, मैं उसे वापिस ले जाऊँगा। बहुत लम्बे समय तक मेरे निवेदन करने के उपरांत भगवान ने घोषणा की - 'ठीक है, उसके बदले मैं किसी नेता को वापिस ले लूँगा। अब जैसाकि आप जानते हैं, कुछ दिनों पहले ही श्रील ग़ौर गोविंद स्वामी, जोकि एक गुरू एवं जी बी सी सन्यासी थे, हृदय रोग से आक्रांत होकर अपना शरीर त्यागे हैं। मैंने इस बात को पहले नहीं बताया था, क्योंकि उस समय मैं किसी को भयभीत नहीं करना चाहती थी।पर जब यह सत्य हो गया है तो अब बताने में कोई असुविधा नहीं है।" कैरोलिना के मेरे मित्र विश्वम्भर को जब यह जानकारी दी तो उसने कहा - "यह आश्चर्यजनक है। मेरी धर्मपत्नी को भी भगवान एवं आम के बारे में स्वप्न आया है। कल जब वह मायापुर के परिसर के बाहर के रास्ते से गुज़र रही थी तो दुकान में पड़े आम के अचार को देखा तो भगवान नृसिंह के लिए ख़रीदने की इच्छा

हुई। पर उस अचार के शुद्धता के बारे में संदेह होने के कारण उसने नहीं ख़रीदा। लेकिन कल रात भगवान नृसिंह उसके स्वप्न में आए एवं पूछा - मेरे आम का अचार कहाँ हैं।"

जब भगवान नृसिंह पहले पहल मायापुर में आए थे, सभी पुजारी उनके विकराल रूप को देखकर उनकी पूजा करने में हिचकते थे। विशेषकर भव सिद्धि दास भयभीत थे एवं उनकी पूजा अर्चना करते समय सहमे हुए रहते थे। भगवान को शयन कराने के पश्चात एक रात्रि गर्भगृह से बाहर आने के ठीक पहले उन्होने एक इतनी ज़ोरदार आवाज सुनी कि उसके रोंगटे खड़े हो गए। डरते डरते उन्होंने पीछे मुड़कर देखा, लेकिन सब कुछ अपनी जगह पर ही था। इसलिए वे तत्परता से उस जगह से निकल कर बाहर से दरवाज़ा बंद कर दिया। कोई भी अनदेखी भूल के लिये भगवान से क्षमा याचना करते हुए भगवान के प्रति साष्टांग प्रणाम निवेदन किया। उसी रात के अंतिम पहर में उनका गद्दा हिलने के कारण उनकी नींद खुल गई। चूंकि वे उपर वाले विस्तर पर सोये थे, उन्होंने सोचा-अवश्य ही नीचे में सोये हुये पुजारी मंगला आरती के लिए उठ रहे होंगे। जब उन्होंने मलते हुए आँखें खोलीं तो देखा कि भगवान नृसिंह बगल में विस्तर पर बैठे हैं। वह भाग्यशाली पुजारी और अधिक भयभीत हो गया। वहाँ से भागने के लिए जैसे ही वह उठना चाहा,भगवान नृसिंहदेव अपने दोनों हाथ उनके कंधे पर रख दिया। उसे एसा लगने लगा कि पूरे विश्व का भार उसके कंधे पर आ गया है। "शांत हो जाओ, अपने चित्त को शांत करो" - भगवान ने उसे सांत्वना देते हुए कहा - "मैं तुम्हे सिर्फ यह कहने आया हूं कि मंदिर में जब तुम मेरी पूजा अर्चना करते हो तो भय की कोई बात नहीं है। कृपया अपने भय का त्याग करो।" इतना कहकर भगवान अंर्तध्यान हो गये। लेकिन भवसिद्धी मकान के बरामदे में इस छोर से उस छोर तक दौड़ता रहा।

कुछ भक्तों ने उससे पुछा कि क्या बात है? पर उन्हें अलग अलग जवाब मिला। उन्होंने सोचा कि शायद पागल हो गया है या कोई भूत उसपर सवार हो गया है। अंत में भवसिद्धी भागते भागते मंदिर पंहुच कर जिस दरवाजे पर भगवान नृसिंह की पूजा अर्चना होती है एवं जहाँ उन्हें प्रार्थना निवेदन किया जाता है, वहां साष्टांग निवेदन में लेट गया। थोड़ी देर बाद वह शांत हुआ एवं अपने कमरे की ओर लौटने लगा। उसे आश्चर्य हुआ कि सब उसकी ओर देख रहे हैं। जब उसने नीचे की ओर नजर घुमाई तो उसे उत्तर मिल गया - वह सिर्फ जांघिया पहने हुए था। पिछले गौर पुर्णिमा समारोह में भवसिद्धी से मेरी मुलाकात हुई। अब वह अमेरिका में रहता है। मैंने इस घटना के विषय में पूछा। उसने कहा - हाँ, मेरे कंधे पर अभी तक भगवान नृसिंह के दो चिन्ह मौजूद हैं। अब करीब करीब जा चुके हैं, किन्तु दिखलाई पडते हैं।

भगवान नृसिंहदेव का दर्शन करने का दावा करने वाले वे अकेले व्यक्ति नहीं हैं। एक बार पास के गौड़ीय मठ मंदिर से एक भक्त भगवान नृसिंहदेव की पूजा अर्चना करने आए। उन्होंने हमारे प्रधान पुजारी जन निवास से कहा कि नृसिंह चतुर्दशी (नृसिंहदेव के प्राकट्य दिवस) पर पूरी रात जागकर उन्होंने नाम जप किया था। रात्रि के शेष होने से पहले उनके कमरे में भगवान नृसिंह देव प्रकट हुए थे। वे हमारे मंदिर वाले रुप में थे। वे लाल रंग का परिधान पहन रखे थे। वे मुझ पर मुस्करा

रहे थे। मेरे गुरु महाराज ने कहा कि मैं बहुत भाग्यशाली हूं एवं मुझे यहां आकर उनकी पूजा अर्चना करनी चाहिये।

एक अन्य घटना में घर से भागे हुए एक बच्चे के माता पिता पूरे देश में खोज करने के पश्चात् उन्हें समाचार मिला कि उनका बच्चा हमारे केन्द्र में है। तुरंत आकर पूरे दिन तक अपने बच्चे की खोज में लगे रहे। उन्होंने स्वागत कक्ष से लेकर प्रत्येक भक्त से पुछताछ की,पर भाग्य ने उनका साथ नहीं दिया। दिन के शेष में भगवान नृसिंहदेव की संध्या आरती के समय मां दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रही थी - मेरे प्रिय भगवान, पिछली बार जब मैं आई थी तो नृत्य करते करते मैंने नाम जप में भाग लिया था। परन्तु पुत्र के लापता हो जाने के बाद जीवन में कोई सुख नहीं मिल पा रहा है। हे भगवान, मेरे पुत्र के लौटने के बाद ही मैं अपने दोनों हाथ उठाकर जप कर पाऊँगी - हरि बोल, हरे कृष्ण। जिस क्षण ये शब्द उसके मुख से निकल रहे थे, उसी समय एक व्यक्ति उसके एवं भगवान नृसिंहदेव के मध्य आकर रुक गया। वह उसका पुत्र ही था। अब माता पिता दोनों ने वैष्णव दीक्षा प्राप्त कर ली है, नामहट्ट केन्द्र प्रारम्भ कर दिया है एवं उत्साहपूर्वक भगवान के दिव्य लीलाओं का प्रचार कर रहे हैं।

और भी कई कहानियां हैं - कुछेक दोहराने में मुझे संकोच होता है एवं अन्यों का मैं वर्णन नहीं कर सकता। मुझ पर विश्वास करते हुए कुछ भक्तों ने उनके अनुभवों को गोपनीय रखने के लिये कहा है। इससे उन भक्तों की आस्था एवं विश्वास और भी दृढ हुए हैं। साथ ही साथ मेरा भी। इसलिये इन लीलाओं से दूसरों को भी अगर इसी प्रकार कृष्ण भावना में अग्रसर होने में मदद मिलती है तो यह बहुत लाभदायक है। शास्त्रों से प्रमाणित न होते हुए भी इनकी उपादेयता में कोई संदेह नहीं।

पंकजआंघ्री दास सन् 1973 में इंगलैंड में इस्कान में युक्त हुए थे। एक वर्ष बाद ही वे मायापुर आ गए, जहाँ उनके जुड़वा भाई जननिवास रहते थे। तब से दोनों भाई स्थायित्व के साथ विग्रहों की पूजा अर्चना कर रहें हैं। 1986 में भगवान नृसिंहदेव के स्थापत्य के साथ पंकजआंघ्री इस अर्ध नर अर्ध सिंह रुपी भगवान की पूजा अर्चना प्रारम्भ कर दी। इन पुजारियों की शुद्धता एवं समर्पण भाव पूरे वैष्णव समाज के लिए अनुकरणीय हैं - मायापुर जरनल से उद्धृत

भगवान श्री नृसिंहदेव - अपने उग्रतम रुप में

- पंकजआंध्री दास

ओम नमो भगवते श्री महानृसिंहाय दंष्ट्राकरालवदनाय घोरूपाय वज्रनखाय ज्वालामालिने मम विघ्नान पच पच मम भयान भिंदी भिंदी मम शत्रुन विद्रवय विद्रवय मम सर्वारिष्टान प्रभंजय प्रभंजय छट छट हन हन छिन्दी छिन्दी मम सर्वाभीष्टान पूरय पूरय माम् रक्ष रक्ष हुम फट् स्वाहा।

कराल दन्त समन्वित घोर रुपी वज्रनख विशिष्ट भगवान महानृसिंहदेव आप मेरे विघ्न समूह का विनाश कीजिये। मेरे शत्रुओं को तितर वितर कीजिए। मेरे समस्त अमंगल का सर्वप्रकार विनाश कीजिए। छेद कीजिये छेद कीजिये। हत्या कीजिये हत्या कीजिये। मेरे समस्त आभिष्ट (आपकी सेवा करने का) पूर्ण कीजिये। सर्वप्रकार रक्षा कीजिये।

भगवान नृसिंहदेव का यह मंत्र अत्यंत ही आश्चर्यजनक है - है कि नहीं? मायापुर में इन विग्रह रुप का जिन भक्तों ने दर्शन किया है - विशेषकर मंगला आरती के समय। ब्रह्म मुहूर्त के अंधेरे में, उनका दरवाजा खुलते ही उनका भयंकर रुप आंखों के सामने प्रकट होता है। तेल द्वारा प्रज्ज्वलित 200 दीपों से प्रकाशमान उनके सिंह रुपी चेहरे में स्थित खुले हुये मुँह एवं आंखों एवं दांतों में स्थित चमक को देखकर सभी समझ जाते हैं कि उनके रुप को भयंकर कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है।गर्भगृह के अंदर कपूर एवं घी से प्रज्ज्वलित चमकदार लौ को पुजारी गोल गोल घुमाता है। बाहर में बहुत से भक्त भगवान के दर्शन के लिये एकत्रित होते हैं, क्योकि उन्हें मालूम है कि यह शुभकारक आरती तीन से चार मिनट में समाप्त हो जायगी।

प्रातः के पांच बजने वाले हैं। आरती हो चुकी है एवं भगवान नृसिंहदेव के गर्भगृह के भारी भरकम द्वार बंद हो चुके हैं। मैं विग्रह कक्ष में प्रवेश करता हूं एवं श्रील प्रभुपाद एवं समवेत भक्तबृंद के आशीर्वाद की प्रार्थना करता हूँ। भगवान के सामने करबद्ध खड़े होकर सैं निम्नलिखित प्रार्थना बोलता हूँ - हे केशव, हे जगतपति। हे अर्द्धनर एवं अर्द्धसिंह रुपी भगवान हरि। आपकी जय हो। ठीक एक कीड़े को जिस प्रकार नाखून द्वारा मसल दिया जाता है, उसी प्रकार आपके अपूर्व सुंदर कर कमलों में स्थित आश्चर्यजनक नुकीले नाखूनों द्वारा आपने कीड़ा रुपी हिरण्यकशिपु का तन विदीर्ण कर दिया।

फर्श को साफ करने के बाद कुशा आसन पर बैठकर पूजा प्रारम्भ होती है। सर्वप्रथम स्वयं को भगवान का दासानुदास समझते हुए पूजा में प्रयोग आने वाली सभी वस्तुओं को मैं पवित्र करता हूँ। तत्पश्चात् मैं चन्दन, पुष्प, धूप, घी का दिया एवं कुछ खाद्य सामग्री के साथ मेरे आध्यात्मिक गुरु श्रील प्रभुपाद की पूजा अर्चना करता हूँ। उसके बाद मैं भगवान नृसिंह देव की पूजा अर्चना करने में उनसे सहयोग देने की अनुमति माँगता हूँ। भगवान चैतन्य महाप्रभु एवं श्री प्रह्लाद महाराज के लिए वही पद्धति अपनाते हुए मैं भगवान नृसिंह देव का जल के आचमन एवं मंत्रों के द्वारा षोडस उपचार सम्पन्न करता हूँ। मैं श्री प्रह्लाद महाराज के पाद पद्म का स्पर्श अपना मस्तक रख करता हूँ एवं आशीर्वाद के लिए प्रार्थना करता हूँ - परमेश्वर भगवान सिर्फ़ आपके आसुरी पिता हिरण्यकशिपु द्वारा आपके प्रति प्रदत्त क्लेश निवारण के लिए ही आविर्भूत हुए थे, हे प्रह्लाद महाराज, आप द्वादश महाजनों में अन्यतम भगवत भक्ति के महान आचार्य हैं। कृपा करके आप परमार्थिक सत्य की समझ प्रदान करें।(भगवान

नृसिंह देव की बेदी पर 100 शालिग्राम शिला स्थित हैं। अभिषेक करने के लिए मैं उन्हें उठाता हूँ। मध्य में स्थित एक बड़ा शिला जिसके मस्तक पर मुकुट रहता है, वे नरसिंह शालिग्राम हैं।)

हालाँकि शास्त्रों के अनुसार यह विश्वास है कि विग्रह के पाद पद्म पर अपना मस्तक रखकर स्पर्श करना चाहिए, सब समय यह संभव या व्यवहारिक नहीं होता है। इसलिए हमलोग हेल्मेट टोपी जैसा दिखने वाला विग्रह के पादुका, जिसे सतारी कहा जाता है, भक्तों के सिर पर रखते हैं। पुजारी होने का एक विशेष लाभ हमें मिलता है कि हम भगवान के पाद पद्म पर सीधे सीधे अपना मस्तक रख सकते हैं। ऐसा करते हुए भगवान को कोई भी भावी असुविधा होने के प्रति उनसे माफ़ी की भीख माँगते हुए, मैं भगवान के पोशाक उतारकर उनके शरीर को एक नर्म एवं भीगे हुए गमछे से पोछने लगता हूँ। चंदन या खस जैसे शीतल तेल द्वारा उनकी मालिश करने से उनका शरीर चमकने लगता है। उनका रूप अपूर्व, कोमल एवं सुगठित है। शक्तिशाली के साथ वे मनमोहक भी लगते हैं। उनके घुटने मुड़े हुए हैं, कूदने के लिए तत्पर। उनके कमर के चारों तरफ़ एक ख़ुदाई किया हुआ सिंह का मुख है, चेहरे में जिसके बड़े बड़े गाल हैं, खुले हुए मुँह से जीभ निकला हुआ है। उनकी नाभि गहरी है एवं छाती चौड़ी है। भगवान नृसिंह देव का दिव्य शरीर चिकना, स्पर्श करने से नर्म एवं अत्यंत नयन सुखकारी है। उनका गला तरह तरह के हार एवं आभूषणों से सुसज्जित है। भगवान के अष्ट भुजा हैं - छह में तलवार, कमल फूल, चक्र, शंख,गदा एवं ढाल है - ब्रह्मा को दिये गए वचन की रक्षा के लिए। उनके सामने के दो भुजाओं में कोई अस्त्र नहीं है।

भगवान अपने भक्तों के प्रति कोई भी अत्याचार सहन नहीं कर सकते। कहा जाता है चेहरा मन का दर्पण है। अगर यह सत्य है तो हमलोग देख व समझ सकते हैं कि भगवान राक्षसों में सबसे बड़े राक्षस हिरण्यकशिपु, जोकि भगवान के विशुद्ध भक्त प्रह्लाद को मारना चाहता था, पर हमला करने के लिए जब खंभे को फाड़कर कूदते हुए निकले थे तो कितने उग्र रूप में रहे होगें। उनके क्रुद्ध नयन पिघले हुए सोने सदृश्य एवं उनके उज्ज्वल केशराशि उनके भयंकर चेहरे को विस्तार देते हैं। उनके भयंकर दंतपक्ति एवं धारदार जीभ की गतिशीलता देखकर लगता है मानो दो तलवारों के बीच लड़ाई चल रही है। उनके कान स्थिर एवं खड़े हुए थे एवं उनके नाक एवं खुला हुआ मुँह ऐसे प्रतीत होते हैं जैसेकि पहाड़ों के बीच कोई गुफा हो।उनके अलग हुए जबड़े डरावने लगते हैं। उनका पूरा शरीर आकाश छुते प्रतीत होते हैं।

भक्तों एवं मंदिर की सुरक्षा के लिए जब भगवान नृसिंह देव के विग्रह को मायापुर लाने का निर्णय लिया गया, तब विग्रह के स्थापना के महत्व के विषय में चर्चा करने के लिए मंदिर के व्यवस्थापकों ने मंदिर के तीन मुख्य पुजारियों को बुलाया था। परंतु जब उस विग्रह की दैनंदिनी पूजा करने के लिए पुजारी नियुक्त करने की बात उठी, तो यह काम करने के लिए किसी ने भी हामी नहीं भरी। इतने दिनों के इंतज़ार के बाद जब विग्रह तैयार है, तो अब उनकी कोई पूजा नहीं करना चाहता। उनकी चिंता स्वाभाविक थी। तत्पश्चात मुझे चुन लिया गया। मुझसे पूछा गया - “आप उनकी पूजा अर्चना करना

क्यों नहीं चाहते?” मैंने उत्तर दिया - “मुझे बहुत डर लग रहा है।” उन लोगों ने कहा - “लगता है आप चार विधि निषेध का पालन नहीं करते।” “निश्चित रूप से करता हूँ, लेकिन...............”

सौभाग्यवश, आत्म तत्व प्रभु, जिन्हेंने दक्षिण भारत से विग्रह की व्यवस्था की थी, ने हमारे भय का निवारण किया। उन्होने कहा कि पहले पहल स्थपति ने भी विग्रह बनाने से इन्कार कर दिया था। उनका कहना था कि स्थानु रूप के नृसिंह की कोई पूजा अर्चना नहीं करता। भगवान ने हिरण्यकशिपु को मारने के लिए अपने भयंकर रूप में खंभ से प्रकट हुए थे। साघारणतः सभी लोग आशीर्वाद माँगने ही भगवान के विग्रह के पास जाते हैं, पर जब भगवान क्रोधित होकर कम्पायमान हो रहे हों - उस समय उनसे कुछ माँगना समझदारी नहीं है। हिरण्यकशिपु का वध करने के बाद भगवान के शांत रूप को चुनना ही श्रेयस्कर होगा। परंतु स्थपति को जब यह मालूम हुआ कि यह विग्रह मायापुर धाम के लिए है, तो उसने हामी भर दी।।कारण, धाम में कोई भी विग्रह आने से धाम के अधिष्ठाता के भाव को धारण कर लेते हैं। मायापुर के अधिष्ठाता हैं - भगवान चैतन्य महाप्रभु - श्री ग़ौर हरि, जिनका भाव है औदार्य यानि उदारता। हालाँकि शेरनी बहुत ही हिंस्र होती है लेकिन अपने बच्चों के प्रति बहुत करुणामय होती है। उसी प्रकार भगवान नृसिंह देव हिरण्यकशिपु जैसे अभक्तों के प्रति भयंकर हैं, परंतु प्रह्लाद महाराज जैसे भक्तों के प्रति अति भद्र एवं करुणामय हैं। भगवान को पोशाक पहनाते समय एवं उनकी कृपा याद करते हुए मैं सोचने लगा कि किस प्रकार कुछ लोगों ने भगवान नृसिंह देव के पूजा अर्चना के हमारे उद्देश्य को समझने में भूल की। कभी कभी भक्त गण कहते हैं कि नृसिंह देव की पूजा अर्चना तो बैकुंठ भाव है एवं यह हमें भगवान के अंतरंग एवं सर्वोच्च धाम गोलोक वृंदावन नहीं ले जा सकती। परंतु भगवान नृसिंह देव का झुकाव विशेषकर राधा-कृष्ण के भक्तों के प्रति रहता है। वे स्वयं कृष्ण हैं। हमारी भक्तिमयी सेवा में आने वाली सभी बाधाओं को दूर करने की हमारी इच्छा को पूर्ण करने के लिए विशेषकर वे इस रूप में प्रकट हुए हैं। अगर कोई सब समय अपने बाहों को ऊपर उठाकर पूर्ण प्रेम पूर्वक निताई ग़ौर और राघा माधव का नाम पुकार सकता है तो यह अति सुंदर है। लेकिन आपके इस स्वतःस्फूर्त नाम जप में कोई बाधा उत्पन्न होती है तो पूर्ण विनय के साथ हमें भगवान नृसिंह देव के पास जाकर प्रार्थना करनी चाहिए कि वे हमारे मन या ह्रदय में स्थित तामसी वृत्तियों को अपने नुकीले नख़ से टुकड़े टुकड़े कर उन्हें बाहर निकाल फेंकें। यह उनका प्रमुख उद्देश्य है। श्रील भक्तिबिनोद ठाकुर ने लिखा है - इसलिए मैं भगवान नृसिंह देव के चरणों में प्रार्थना करूँगा कि वे मेरे ह्रदय को पवित्र कर कृष्ण की सेवा करने की इच्छा प्रदान करें। क्रंदन करते हुए मैं नृसिंह के चरण कमल में याचना करूँगा कि मैं सभी बाधाओं से मुक्त होकर नवद्वीप धाम में श्री श्री राधा कृष्ण की पूजा अर्चना कर सकूँ। आगे वे लिखते हैं - उस क्षण मैं भगवान नृसिंह देव की दया से राधा कृष्ण के प्रति मैं अपने दिव्य प्रेमानंद के लक्षण प्रदर्शित करूँगा एवं भगवान के मंदिर के दरवाज़े के समीप ज़मीन पर लोट पलोट हो जाऊँगा। जब श्री वास ठाकुर नृसिंह की पूजा अर्चना कर रहे थे तो क्या भगवान चैतन्य महाप्रभु ने उनसे यह कहकर अपनी दिव्यता प्रकट नहीं की थी - श्री वास, क्या तुम सब नहीं जानते कि मैं वही व्यक्ति हूँ जिसकी तुम बंद दरवाज़े के पीछे अर्चना करते हो? एक अद्वैत आचार्य ने भी तो जब उच्च स्वर के नाम जप के साथ तुलसी दल एवं गंगाजल का भेंट चढ़ाया तो भगवान अवतरित हुए थे। यह कहा जाता है कि अद्वैत आचार्य नृसिंह-शालिग्राम की अर्चना करते थे।

मैं अब भगवान के शरीर पर आभूषण पहनाना प्रारंभ करता हूँ। श्री नृसिंह देव के गलहार को ठीक करता हूँ ताकि सही ढंग से लटकता रहे। उनकी बाहों में चमकते हुए आभूषण बाँध देता हूँ, पद्म

अंगुलियों में अँगूठी पहनाता हूँ। हे प्रभु, मैं आपके कितना समीप हूँ, फिर भी कितना दूर हूँ। मैं भक्त कब बनूंगा? आपका अन्यतम भक्त प्रह्लाद यह इंगित करता है कि वे आपके भयंकर मुँह एवं जीभ, सूर्य के भांति उज्ज्वल नेत्र, डरावने मैहें से भयभीत नहीं है। उन्हे न तो आपके नुकीले गड़ने वाले दातों से, न पेट के नाड़ियों की माला से, न रक्ताभ केश समूह से ही डर लगता है एवं न ही आपके शत्रुओं का वध करने वाले आपके नख़ समूह से वे भयभीत होते हैं। वे तो यह कहते हैं - मैं इस जड़ जगत में अपने बद्ध जीवन की स्थिति से अत्यधिक भयभीत हूँ। वह समय कब आयेगा, जब आप मुझे अपने चरण कमल के शरण में लेगें। मैं समझता हूँ कि श्री प्रह्लाद अपना अंतिम वाक्य सिर्फ़ हमारे लाभ के लिए ही कहते हैं, क्योंकि वे तो सदैव ही आपके चरणों में पूर्ण रूप से शरणागत थे।

एक बार मैं भी कम से कम कुछ क्षणों के लिए अपने आपको आपके शरणागत पाया। यह घटना 1987 के विकराल बाढ़ के समय की है।कमर भर पानी में खड़े होकर जब मैं आपके प्रति पूजा अर्चना निवेदित कर रहा था, तो एक विशाल डरावना साँप मंदिर में तैर कर आ गया। वह आपके पीछे से होते हुए बाहर निकलने का रास्ता न पाकर मेरे सामने पाँच फुट की दूरी पर रुक गया। कुछ देर तक मेरी ओर देखने के बाद वह गंगा की मिट्टी वाले पानी में ग़ोता मारकर आँखों से ओझल हो गया। अपने को आसन्न ख़तरे में पाकर मैंने देखा कि मेरे हाथ के रोंगटे खड़े हो गए थे। कारण, न तो स्वयं की रक्षा करने के लिए कोई अस्त्र था एवं न ही वहाँ से भागने की क्षमता। मैं अपने को असहाय महसूस करने लगा। एंसी असहाय अवस्था में हे प्रभु मैं आपकी ओर मुड़ा। मैं समझ गया कि मेरा भविष्य पूर्ण रूप से आपके हाथों में था। आप सभी के हृदय में परमात्मा हैं। अगर आप चाहतें हैं कि वह साँप मुझे डॅस ले तो अवश्य ही डॅसेगा। अगर आप चाहते हैं तो वह नहीं काटेगा। मुझको मेरी सेवा पूर्ण करनी है, फल का दायित्व आपका है। तत्पश्चात मैं आपके शरण की सुरक्षा महसूस करते हुए एक बार पुनः शांत हो गया। प्रातः की पूजां मैंने संपन्न कर दी। लेकिन इस घटना के बारे में विचार करने से मैं अपने को रोक नहीं पाया। यह घटना भगवान कपिल द्वारा गर्भ में शिशुओं के वर्णन की याद दिलाती है। अपने असहाय एवं पीड़ित अवस्था में वे हृदय में भगवान परमात्मा का दर्शन पाते हैं। वे पुण्यात्मा हैं एवं प्रार्थना करते हैं कि अगर प्रभु उनको इस असहाय अवस्था से मुक्त करते हैं तो गर्भ से मुक्ति के पश्चात् वे एकांतिक रूप में प्रभु की आराधना करेंगे। पर जैसे ही वे अच्छी तरह से बाहर निकलते हैं, वे सब कुछ भूल जाते हैं। फिर भी मैं आशावान हूँ कि आपके आनंद के लिए मैं अच्छी तरह से सेवा कर सकुंगा। मैं यह बताना चाहूंगा कि जब तक मंदिर कक्ष वन्या के जल से प्लावित रहा, साँप रोज़ आकर विग्रह की प्रदक्षिणा करके बाहर निकल जाता। कौन जानता है वह साँप वास्तव में कौन था?

प्रभु के शरीर को ताज़ा फूलों एवं तुलसी की माला से आच्छादित कर चंदन, सुगंधित पुष्प एवं तुलसी उनके चरणों में अर्पित कर (जोकि भगवान को सब कुछ समर्पित करने का द्योतक है) प्रातःकालीन पूजा सम्पन्न होती है। बाहर में एकत्रित भक्तों के शब्द सुनकर मैं शीघ्रता करने लगता हूँ। अब दर्शन का समय हो गया है। मैं तीन बार शंखनाद करता हूँ एवं द्वार खुलने पर भगवान का अपूर्व वैभवशाली रूप दृष्टिगोचर होने लगता है। जय श्री प्रह्लाद-नृसिंहदेव। सभी भक्त साष्टांग प्रणाम करते हैं। वे अपने उग्र नृसिंह का दर्शन करके प्रसन्न हैं। अपने हृदय में वे जानते हैं कि प्रभु इतने उग्र नहीं हैं जितना दिखते हैं।

— ग्रीष्म 1994 में मायापुर पत्रिका में प्रकाशित आलेख से उद्धृत

मुझे मेरी आँखें वापिस चाहिए

- आत्मरति दासी

ग्रीस की आत्मरति दासी सन 1980 में इसकान की सदस्या बनी। संप्रति वे मायापुर धाम में निवास करती हैं। उनके पति का नाम गोकुलानन्द दास एवं पुत्री का नाम ग़ौरलीला दासी है। यह लेख उन्होंने सम् 1997 में मायापुर पत्रिका के लिए लिखा था।

गत वर्ष दिसंबर मास के एक सुहावने सुबह में क़रीब 11 बजे मैंने आश्चर्यजनक रूप से मंदिर के एक लीला में अपने आपको अनायास ही संलग्न पाया। मंदिर जाकर मैं अपने आपको परम पिता परमेश्वर के सानिध्य की इच्छा करते हुए उनके अन्यतम भक्त प्रह्लाद से प्रार्थना की।आकर्षणीय प्रह्लाद हाथ जोड़कर प्रणाम की मुद्रा में भगवान के पास ही खड़े रहते हैं। उनके लघु शरीर को सद्यः पुष्पों एवं आभूषण से सजाया गया था। उनके प्रति प्रणाम एवं श्रद्धा निवेदन करते हुए मैंने प्रार्थना की -मेरे प्रिय प्रह्लाद,आप भगवान नृसिंह देव से सब प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त करने में सिद्धहस्त हैं। आपने अपने आसुरी पिता हिरण्यकशिपु को क्षमा प्रदान करने का आशीर्वाद प्राप्त कर लिया। कृपया अपने भगवान से मुझ जैसे अकिंचन आत्मा को आशीर्वाद प्रदान करने के लिए कहिए ताकि भक्तिमय सेवा के रास्ते में आने वाली सभी बाधाएँ नष्ट हो जायें। कृपया वास्तविक सुख का मार्ग मुझे सुझाएँ।

तत्पश्चात् खड़े खड़े मैं भगवान के सुंदरता एवं सदयता पर अपना ध्यान केंद्रित करने लगी। उसी समय मैंने एक सुमधुर एवं गंभीर आवाज़ सुनी - “मैं अपनी आँखें वापिस चाहता हूँ।” पहले पहल मैंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया एवं अपना ध्यान प्रार्थना पर केंद्रित करने में लगी रही। पर वही आवाज़ दूसरी बार फिर से आई- “मैं अपनी आँखें वापिस चाहता हूँ।” जब मैंने इस स्पष्ट संदेश को एक बार फिर अनसुनी करनी चाही तो मेरे हृदय में जलन एवं व्यथा का अनुभव होने लगा। घबराकर मैं भौचक्की सी खड़ी रही। मैं अब क्या करूँ? फिर आवाज़ आई - “पुजारी के पास जाओ।” मैंने सोचा - ठीक है, मुझे कोई हानि नहीं होने वाली थी। अगर पुजारी यह समझेगें कि यह मेरा उन्माद है तो ज्यादा सा ज़्यादा मेरा मिथ्या अहं कुछ कम होगा।

उनके आदेश का पालन करने के लिए आवश्यक शक्ति प्रदान करने की भगवान से प्रार्थना करते हुए मैंने दंडवत प्रणाम किया एवं अति द्रुत गति से चलकर मैं पुजारी कक्ष पहुँच गई। वहाँ पर जन निवास प्रभु श्रीमद् भागवत पढ़ रहे थे। उस कक्ष का वातावरण सौम्य एवं अप्राकृत जगत जैसा था। वहाँ पर कई मिनटों तक खड़ी रहकर उनका ध्यान मेरी ओर आकृष्ट होने की प्रतीक्षा करने लगी। जो कुछ भी घटित हुआ था, मैंने उनको बताया। उन्होंने भगवान नृसिंह देव के पुजारी एवं अपने जुड़वा भाई पंकजआंघ्री प्रभु से मिलने के लिये कहा।

इसके बाद मुझे ऐसा लगा कि इस समय मुझे और कुछ करने की आवश्यकता नहीं। दूसरे दिन जब मैं भगवान नृसिंह देव के आकर्षणीय विग्रह के पास पहुँची, मेरे मन में शंका हुई - क्या ऐसा तो नहीं कि वह आवाज़ मेरे दिमाग़ की उपज हो जोकि पिछले छह सप्ताह से व्यथा से परिपूर्ण मेरे आँखों की समस्या का समाधान माँग रही है। इस तरह से सोचते हुए मैं भगवान से उत्तर की प्रार्थना करने लगी। इस बार और अधिक गंभीर एवं दृढ़ स्वर में आदेश मिला - "मेरी आँखें मिलने पर ही तुम्हें तुम्हारी आँखें मिलेंगी।" - उनका रूप निरंतर सौम्य एवं मृदु ज्योति संप्रेषित करता रहा। मेरा हृदय शांति एवं सौहार्द्र से भर गया। अलौकिक विश्वास से अभिभूत मुझे ऐसा लगने लगा कि मानो मेरा मस्तक आकाश छू रहा हो। दूसरे दिन प्रातः 2.20 बजे नींद से जागने पर तरोताज़ा महसूस कर रही थी। यह समय मेरे नित्य जागने के समय से बहुत शीघ्र था। साधारणतः मैं 6 बजे के आसपास जागती हूँ। उस मृदु स्वर के कहे अनुसार जल्दी उठकर मैंने नहा लिया एवं मंगला आरती में भी भाग लिया। तत्पश्चात् उसी स्वर ने भगवान नृसिंह देव के गर्भगृह से पुजारी कक्ष की ओर जाते हुए पंकजआंघ्री प्रभु के पीछे पीछे जाने के लिए प्रेरित किया। मुझे अत्यधिक संकोच हो रहा था। मेरी आँखों से अश्रु धारा बहने लगी। इस घटना के बारे में उन्हें बताने के प्रति मेरे हृदय में एक अनिच्छा बोध हो रहा था। भगवान के अभिषेक के लिए वे सामान तैयार कर रहे थे। मैं उनसे बातें करने लगी। पंकजआंघ्री प्रभु ने मेरी बातों को ध्यान से सुना। बिना कुछ कहे, मुस्कुराते हुए भगवान नृसिंह देव के भोग से मुझे महामिष्टान दिया। दूसरे दिन जब प्रातः मेरी पुत्री मंदिर से लौटी, तो वह शोर कर रही थी - "माँ, उन लोगों ने नृसिंह देव की आँखें बदल दी है।उनके अब सुंदर लाल आँखें हैं।" जैसाकि उस सुमधुर, गंभीर स्वर ने वादा किया था, तीन दिन के अंदर चमत्कारिक ढंग से मेरी आँखें ठीक हो गईं। मायापुर के कृपालु भगवान नृसिंह देव की जय हो। जय हो।

विशेष : भगवान नृसिंह देव के पहले लाल आँखें थी। एक दिन एक भक्त मायापुर आकर उनकी आँखों के लिए पीले रंग के दो अति मूल्यवान पत्थर भेंट चढ़ाया। अनिच्छा के साथ पुजारियों ने आँखें बदल दीं। उन्हें यह जानकर प्रसन्नता हुई कि प्रभु को उनकी पहले वाली आँखें ही चाहिए।

भगवान नृसिंहदेव की अन्य लीलाएँ

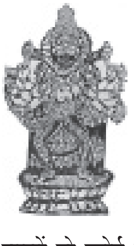

प्रथम लीला : भगवान नृसिंहदेव के पुजारी को एक आश्चर्यजनक स्वप्न आया, जिसमें मंदिर के निर्देशक ने उन्हें बुलाकर कहा - "तुम डीज़ल तेल ले आओ। हमलोग भगवान नृसिंह देव की बलि देने वाले हैं।" पुजारी भौंचक होकर पूछा - "आप लोग किसकी बलि देने वाले हैं? "हाँ, हमलोग भगवान नृसिंह देव की बलि देने वाले हैं।" "आप ऐसा नहीं कर सकते। यह एक उन्माद है।" "सिर्फ डीज़ल ले आओ। क्या तुम लाओगे?" "ठीक है, मैं तेल ले आऊँगा। लेकिन मुझे इन बातों से कोई लेना देना नहीं। यह बात मेरी समझ से परे है।"

कुछ देर बाद पुजारी मंदिर लौट आया। यह देखकर वह पूर्ण रूप से घबरा गया कि आग में जलकर सब कुछ भस्म हो गया है। विग्रह के सिर्फ़ पाँव एवं एड़ियाँ बची हैं। दूसरे दिन प्रातः उन्होंने प्रधान पुजारी से मिलकर स्वप्न के बारे में सब कुछ बताकर पूछा कि इस स्वप्न का कुछ अर्थ समझ में आ रहा है क्या? थोडी देर तक सोचने के उपरांत वे मुस्कुराने लगे एवं कहा - हाँ, कल जलदान (सालिग्रामजी पर एक महीने तक जलाभिषेक का आयोजन) का पहला दिन था, लेकिन हमलोग उसका पालन करना भूल गए। इसलिए भगवान नृसिंह देव ने आपको सूचित किया है कि वे ताप से जल रहे हैं। अतएव हमें आज से ही जलदान प्रारंभ कर देना चाहिए। उसी दिन से ही हमलोगों ने जलदान प्रारंभ कर दिया।

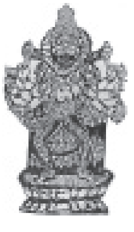

द्वितीय लीला : एक बार की बात है कि हमेशा की तरह भगवान नृसिंह देव की पूजा चल रही थी। उस समय पुजारी ने यह देखा कि नृसिंह देव की माला में से एक फूल निकल कर गिर गया है। पुजारी ने सभी उपस्थित लोगों से पूछा कि क्या कोई भी व्यक्ति भगवान नृसिंह देव के प्रति विशेष पूजा निवेदन कर रहा है। सामने की पंक्ति से किसी ने जबाब नहीं दिया, लेकिन पीछे से एक महिला सामने आई। उसकी आंखों में आँसू थे। उसने कहा - मेरी सुपुत्री का विवाह हुए चार-पांच वर्ष हो गए हैं, लेकिन अभी तक उसके संतान नहीं है। मेरी लड़की के ससुराल वाले इसे अशुभ मानते हैं। इसलिए मैं भगवान से प्रार्थना कर रही थी कि इस निराशा भरी परिस्थिति में वे मदद कर सकते हैं। तब पुजारी ने कहा - भगवान नृसिंह ने आपकी प्रार्थना स्वीकार कर ली है। उनकी माला से फूल गिरना उस बात का द्योतक है। कृपया फूल को अच्छी तरह से अपने पास रख लें। उस फूल को धोकर , उस पानी को अपनी लड़की को पिला सकती हो।

एक वर्ष पश्चात वही माताजी अपने लड़की, जंवाई एवं नवजात शिशु को लेकर मुस्कुराते हुए नृसिंह देव के पास आए। उसने पुजारी को एक वर्ष पहले की घटना की याद दिलाई, जिसके फलस्वरूप उसकी पुत्री ने एक बच्चे को जन्म दिया। उसने उसका नाम प्रह्लाद रखा। एक बार फिर उन्होंने भगवान नृसिंहदेव को फल एवं पुष्प सहित अच्छी तरह पूजा अर्चना की।

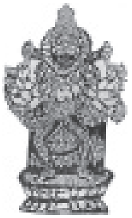

तृतीय लीला : हमारे नामहट्ट की भक्त कल्याणी दासी के दो पुत्रियाँ हैं। एक का नाम प्रतिभा एवं छोटी वाली का नाम अनुभा है। दोनों ही विवाहित हैं एवं उनके समझदार बच्चे हैं। दोनों बहनें पश्चिम बंगाल के बरहमपुर नामक शहर में रहती हैं। एक बार प्रतिभा का पति अत्यंत गंभीर रूप से बीमार हो गया एवं होश खो बैठा। ऐसा लगता था कि मृत्यु आसन्न है। अपने संबधियों के साथ साथ छोटी बहन अनुभा को भी अपने बहनोई के स्वास्थ्य की अत्यधिक चिंता थी। वह अस्पताल गई। चूँकि वह भक्त थी, उसने इस्कान, मायापुर में भगवान नृसिंहदेव से प्रार्थना की कि वे उसके बहनोई की मदद करें। घर आकर वह काफी दुखी मन से सोने चली गई। रात्रि के अंतिम पहर में भगवान नृसिंहदेव उसके स्वप्न में आए एवं कहा - तुम चिंता मत करो, तुम्हारा बहनोई ठीक है। तत्पश्चात् उसका स्वप्न टूट गया। प्रातः अस्पताल से खबर आई कि रोगी की अवस्था में सुधार हो रहा है। ऑक्सीजन एवं ग्लूकोज़ बाहर से देना बंद कर दिया गया है। अब वह बात कर पा रहा है।

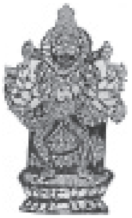

चतुर्थ लीला : एक गाँव में लड़ाई झगड़ा हो गया।एक व्यक्ति पर ऐसिड फेंक कर आक्रमण किया गया था, जिसके फलस्वरूप उसका चेहरा जलकर पूरा विकृत हो गया था। एक आँख की रोशनी पूरी चली गई एवं दूसरी आँख में मात्र दस प्रतिशत रोशनी बची थी। चिकित्सकों ने कहा कि एक आँख में जो दस प्रतिशत रोशनी है, वह भी शीघ्र ही चली जायेगी। जायेगी सुझाव दिया कि रोगी को भेल्लोर(दक्षिण भारत) ले जाकर उसके चिकित्सा का प्रयास किया जा सकता है। उस समय वहां एक भक्त उपस्थित था, जिसने सुझाया कि उसकी आँखों को ठीक करने के लिए भगवान नृसिंह देव से प्रार्थना करनी चाहिए। फलस्वरूप उन्होंने इस्कान, मायापुर में भगवान नृसिंहदेव से प्रार्थना की। दूसरे दिन ही चिकित्सकों को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि रोगी अब अच्छी तरह देख पा रहा था।

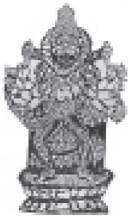

पंचम लीलाः एक रूस की माताजी नृसिंह देव के लिए तुलसी की माला प्रतिदिन बुना करती थी। उसकी सेवा से प्रसन्न होकर नृसिंह देव के पुजारी ने प्रसाद के रूप में नृसिंह देव के कृत्रिम नाखून उसको दिए। उस रात उस माताजी को स्वप्न आया कि भगवान नृसिंह देव उसके पास आकर उसके शय्या पर बैठे हैं। तब भगवान ने लंबे नाखून के साथ अपने कर कमलों को उसके हृदय के अंदर ले गए एवं काला रंग का कोई पदार्थ निकाला। उन्होंने कहा - ध्यान दो, यह प्रेम नहीं है, यह वासना है। अभी और भी है। मैं इसका क्या करूँ? उस समय माताजी कोई उत्तर नहीं दे पाईं। उनका स्वप्न भंग हो गया। दूसरे दिन वे भगवान नृसिंह देव के सामने गईं एवं प्रार्थना कीया कि उस पदार्थ को बहुत दूर फेंक दे।

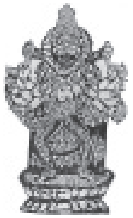

षष्ठम लीला : इस्कान यूथ फारम के एक भक्त के पिता सदैव अपने पुत्र के साथ तर्क वितर्क किया करते - राधा माधव के रहते हम नृसिंह देव की पूजा अर्चना क्यों करें? वह लड़का अपने पिता को समझाने की चेष्टा करता कि कृष्ण एवं नृसिंह देव अभिन्न हैं। पर उसके पिता इस बात को स्वीकार नहीं कर पाते। सन 2003 के नृसिंह चतुर्दशी के अवसर पर वह लड़का अपने पिता के साथ मंदिर में भगवान नृसिंह देव के अभिषेक का दर्शन कर रहा था। अचानक उसके पिता को नृसिंह देव के चेहरे की जगह माधव का चेहरा दिखलाई देने लगा। वह घूमकर राधा माधव को देखता और फिर नृसिंह देव की ओर देखता। अभी भी उसे नृसिंह देव के चेहरे की जगह माधव का चेहरा ही दिखाई दे रहा था। बीस सेकेंड तक यह चलता रहा। इस प्रकार उसे समझ में आया कि माधव एवं नृसिंह देव में कोई अंतर नहीं है।

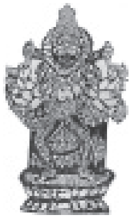

सप्तम लीला : सन 2004 में श्रील जयपताका स्वामी की शिष्या दक्षिण कलकत्ता की कविप्रिया देवी दासी ने भगवान नृसिंह देव के लिए गलहार आभूषण बनवाया। विभिन्न कारणवश मायापुर आकर वह आभूषण भगवान को समर्पित नहीं कर पा रही थी। इसी बीच वह कई प्रकार से बीमार पड़ने लगी। वह कई चिकित्सकों के पास गई, कई औषधियाँ खाई, पर कोई सुधार नहीं हुआ। अंत में चिकित्सकों ने कहा कि वह थायरायड बीमारी से ग्रस्त है। इस कारण उसका चलना फिरना बंद होने की संभावना है। वह अत्यधिक चिंताग्रस्त थी, सोच रही थी, कि अब क्या करूँ? अचानक ही उसे भगवान नृसिंह देव एवं उनको समर्पित किए जाने वाले आभूषणों की याद आई। हालाँकि वह बीमार थी, काफ़ी प्रयास के बाद मायापुर आकर वह गलहार भेंट चढ़ाने में सफल हुई। उसके तीन दिन के अंदर ही वह पूर्ण रूप से स्वस्थ्य हो गई। भगवान नृसिंह देव की जय।

अष्टम लीला :

धन्यवाद, भगवान नृसिंह देव

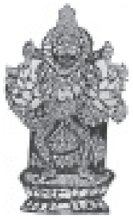

22 अप्रैल 2005 को आठ वर्षीय रेवती सुंदरी देवी दासी मायापुर धाम में गृहस्थ बाग के बाँस से बने एक कमरे की छत पर चढ़ रही थी। अचानक में ही वह छत से सिर के बल गिर पड़ी एवं दुर्भाग्यवश छत भी उसके ऊपर आ गिरा। सदमे में वह एक घंटे तक बेचैनी में ज़ोर ज़ोर से रोती रही। वह भीषण रूप से डर गई थी। होमियोपैथी के हमारे वैष्णव चिकित्सक ग़ौर बाबा ने उसका इलाज किया एवं सी टी स्कैन करने की सलाह दी। तीन दिन के बाद रेवती मध्य रात्रि में नींद से उठकर काले रंग के खून की उल्टी की। शीघ्र ही उसे कलकत्ता ले ज़ाया गया। रास्ते में उसका नाक बह रहा था, बाद में नाक से ख़ून निकलने लग गया। हमलोग उसे सीधे एक अच्छे शिशु विशेषज्ञ के पास ले गए, जिन्होने शहर के सबसे बड़े स्नायु विशेषज्ञ को बुला लिया। उन्होने सी टी स्कैन करवाया एवं अवस्था को भाँपते हुए शहर के एक बहुत ही अच्छे स्नायु शल्य चिकित्सक के पास भेज दिया। पूरी रात स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। हमलोगों को पता चला कि नाक से जो पानी

की तरह तरल पदार्थ निकल रहा था, वह मस्तिष्क से निकल कर आ रहा था। स्कैन से स्पष्ट पता चल रहा था कि उसके मस्तिष्क के बुद्धि वाले भाग का सतह फट जाने से तरल निकल रहा था। मस्तिष्क का वह भाग फूल गया था एवं वहाँ रक्त जमा हो रहा था, जिसके कारण रक्तचाप बढ़ रहा था। उस बच्ची के सिर में अत्यधिक पीड़ा हो रही थी एवं घटना के प्रारंभ से लेकर अब तक कोई सुधार नहीं हो रहा था। नसों के द्वारा दवाइयाँ देकर चिकित्सकों ने कुछ दिनों तक प्रयास किया। उसकी आँखों की सफ़ेदी लाल में बदल गई थी। वह अचल अवस्था में पड़ी थी एवं उसे कोई भी विषय में रुचि नहीं थी।

अंत में चिकित्सकों ने कहा कि दूसरे दिन वे एक विशेष स्कैन करेंगे ताकि दिमाग के सारे भागों को देखकर उसके चोट एवं घाव की वास्तविक स्थिति के बारे में पता लग सके। तभी वे लोग निश्चय कर पायेंगे कि क्षति को ठीक करने के लिए वे शल्य चिकित्सा करेंगे या नहीं। सुबह 9 बजे तक वे लोग अपना निर्णय देंगे।

मैंने पंकजआंघ्री प्रभु को दूसरे दिन सबेरे फोन किया। पूरी स्थिति समझाते हुए मैंने उनसे नृसिंह भगवान से प्रार्थना करने के लिए कहा। तुरंत उन्होंने कहा कि वे सुबह 5 बजे के अंदर अभिषेक एवं अन्य सभी कार्यक्रम के साथ पूर्ण पूजा निवेदन करेंगे। यही विशेष स्कैन का समय भी था।

दूसरे दिन जब मैं चिकित्कों से मिली, वे सभी हतप्रभ थे। उन्होंने कहा कि नए स्कैन से पता चलता है कि सारे चोट एवं घाव चमत्कारिक ढंग से ठीक हो गये हैं। पीडा, नाक से रक्त प्रवाह, दिमाग से तरल निकलना, उल्टी जैसे सभी समस्या अचानक दूर हो गये हैं। जब मैं रेवती से मिलने गई तो वह शय्या पर बैठी थी। उसकी आँखों में चमक थी। उसकी आँखें ताजा दिख रही थीं एवं आँखों का रंग फिर से सादा हो गया था। घन्यवाद, भगवान नृसिंहदेव।

उस विषय में रेवती के विचार थे कि - दादीमां, अगली बार अगर मुझे कुछ हो जाय तो चिकित्सकों के पास अपना समय नष्ट मत करना। मुझे सीधे भगवान नृसिंहदेव के पास ले जाना।

प्रेम एवं आभार सहित आपकी दासी
- रचिताम्बरा दासी

नवम लीला :

भगवान नृसिंहदेव अभक्त पर भी अपनी कृपा करते हैं

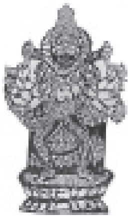

दो महिने पहले यशोदा माता के दत्तक पिता गुजर गये। अस्पताल में उसके रहने के दौरान यशोदा माता एक टेप रेकार्डर में हरे कृष्ण मंत्र भरकर पूरे दिन उसके कक्ष में चालू रखती। उसका दत्तक पिता अर्द्ध अचेतन अवस्था में था। लेकिन जब उसने महामंत्र सुना, चमत्कारिक ढंग से धीरे धीरे वह जागृत अवस्था में लौट आया। ऐसा लगता था कि आँखें बंदकर वह संगीत एवं ध्वनि तरंगों का आनंद ले रहा था। फिर वह संगीत के उतार चढाव के साथ अपने विस्तर के किनारे अपने हाथों से ताल देना प्रारम्भ कर दिया। उसकी अंगुली में स्थित अंगूठी से स्वर निकलते थे - डोन, डोन, डोन..........डोन, डोन, डोन............। ऐसा लगता था कि वह पूर्ण रूप से महामंत्र पर ध्यान केंन्द्रित कर रहा है। अचानक उसने कहा - "देखो, वहाँ पाँच नख से भरे पाँच हाथ वाला पुरूष है। उसका सिर शेर की तरह है। वह मेरे विभाग में आ रहा है। क्या आप नहीं देख पा रहे? वह आ रहा है।" दत्तक पिता ने अभी भी आँखें बंद अवस्था में कहा - अरे हाँ, मैं भूल गया, आपलोग उसे नहीं देख पाओगे, पर वास्तविक में वह यहाँ है। मैं नही जानता, वह कौन है? "उस समय यशोदा माता एवं उनकी पुत्री एक दूसरे की ओर देखे। अति आश्चर्य के साथ उन्होंने कहा - "पिताजी, वे भगवान नृसिंहदेव हैं" "कौन देव......मैं उसे नहीं मानता। लेकिन वह अपना सिर मेरी ओर घुमा रहा है, यह दर्शाने के लिए कि वह है।" यह सब सुनकर यशोदा माता को अति आनंद का अनुभव हुआ। वह अपने घर में मायापुर के नृसिंहदेव विग्रह के प्रारुप रखती है एवं सदैव उनको अपनी हार्दिक प्रार्थना निवेदन करती ताकि उनके पिता मोह रहित होकर शरीर का त्याग करें एवं भावी जन्म में उनकी आत्मा कृष्णभक्त बन जाय। उनके पिता लगातार कह रहे थे - "देखो, वह मुझे देखकर मुस्कुरा रहे हैं एवं फिर से बोल रहे हैं...............मुझ से कह रहे हैं कि जो नाम जप कर रहे हो, मुझे भी करना होगा.................... तुम क्या जप कर रहे हो?" यशोदा माता ने उत्तर दिया - "यह भगवान के पवित्र नाम को पुकारने का मंत्र है" "मैं नही जानता यह मंत्र क्या है। लेकिन मुझे सिखा दो" - उन्होने कहा। "ठीक है पिताजी, कृपया ध्यान से सुनिये एवं मेरे बाद दोहराइए - हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।" धैर्य के साथ यशोदा माता ने अपने पिता को सिखाया। अल्प समय में ही वह सीख गये एवं जप का प्रयास करते करते अच्छी तरह से जप करने लगे। दूसरे दिन विश्राम अवस्था में उनका देहावसान हो गया।

उस सप्ताहांत में हम भक्तगण यशोदा माता के पिता के अंतिम संस्कार पर कीर्तन करने के लिए समवेत हुए। यशोदा माता ने प्रसाद रुपी माला, गंगाजल, तुलसी तैयार की एवं पिता के ललाट पर तिलक लगाया। यह सब उनके गुरु महाराज श्रील गिरिधारी स्वामी द्वारा टेलिफोन पर निर्देशानुसार अच्छी तरह से सब संम्पन्न कर दिया गया। उसके पिता का चेहरा शांत लग रहा था, उसके गाल गुलाबी थे एवं उनका शरीर नरम था। कुछ रीति रिवाज पालन करने के पश्चात् शरीर को चुल्ली में भेज दिया गया। कुछ घंटे बाद दाह संस्कार करने वाले व्यक्ति आए एवं आश्चर्यचकित होकर कहने लगे - "हमने कभी भी किसी के राख को इतना स्वेत एवं सुंदर नहीं देखा, जितना कि आपके पिताजी का है। उन्हे क्या हुआ था? आपलोग क्या उनके लिए जप कर रहे थे? वह जप आप हमें लिख कर दे सकते हैं। हम सीखना चाहते हैं एवं सोचते हैं कि यहाँ पर अपना काम करते हुए हमलोग भी वैसे ही जप करें।" एक व्यक्ति जो भक्त नहीं है, उसके सामने भी भगवान प्रकट हुए। यह शास्त्र के उसी बात को सिद्ध करता है कि अगर कोई भगवान की भक्तिमय सेवा में सब समय युक्त रहता है, तो उसके परिवार के सदस्यों को भी उसका लाभ मिलता है।

- लीन तुलीप, ताइवान
20 मार्च 2006

सन् 2006 एवं 2007 की लीलाएँ

नृसिंहदेव एक पिता का धर्मसंकट दूर करते हैं

9 सितम्बर 2006

बाँकुड़ा जिले के चटना गाँव के निवासी मेरे माता पिता गौडीय मठ के दीक्षित भक्त हैं। मेरा नाम गौरांग है। 6 महिने पहले मैं इस्कान, मायापुर में नियुक्त हुआ था। 3 महिने के नये भक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पूर्ण करने के उपरांत मुझे विद्यालय प्रचार सेवा में लगा दिया गया।

झूलन पुर्णिमा के कुछ दिन पहले मेरे पिताजी मुझे घर ले जाने आये। उनकी इच्छा थी कि मैं उच्चतर माध्यमिक परिक्षा देकर उत्तीर्ण हो जाऊँ। मेरे मन में भी अल्प इच्छा थी कि जाकर मां से मिल आऊँ। मेरे पिताजी के विचार सुनने के बाद भक्तों ने उनसे अनुरोध किया - कुछ तो उनके पैरों पर गिर पड़े - उनसे याचना की कि मुझे फिर से माया के जगत में वापिस न ले जायें। वैष्णव होने के कारण मेरे पिताजी के सामने भी एक धर्मसंकट था। अंत में उन्होंने भगवान नृसिंहदेव की शरण लेते हुए उनसे मार्गदर्शन करने की प्रार्थना की। उस रात्रि भगवान नृसिंहदेव उनके स्वप्न में प्रकट हुए। भगवान बहुत ही शांत मुद्रा में थे। वे अपने हथेलियों को मेरे पिताजी पर फेरने लगे। उन्होने कहा - "तुम चले जाओ। तुम्हारा पुत्र मेरे चरण कमल में यहीं रहेगा।" भगवान को देखकर पूर्ण रुप से चकित होकर मेरे पिताजी साष्टांग प्रणाम करने लगे। तत्पश्चात् भगवान नृसिंहदेव अंर्तध्यान हो गए। आनन्दपूर्वक मेरे पिताजी ने मेरे विभागाध्यक्ष को कहा कि मैं यहाँ रहकर सेवा कर सकता हूं।

मैंने अपने परिवार के अन्य सदस्यों को भी सूचित कर दिया कि मैं कोई भी परिक्षा में भाग लेने के लिए तैयार नहीं हूँ।

कृपया मेरी सहायता कीजिये

—दीपक गुप्ता

10 दिसम्बर 2006 को मायापुर में भक्तिशास्त्री पाठ्यक्रम में भाग लेते हुए दिल्ली से आये दीपक गुप्ता अचानक जल बसन्त (चेचक) से आक्रान्त हो गए। शीघ्रापिशीघ्र स्वास्थ्य लाभ की कामना से उसने एलोपेथिक, होमियोपैथिक,एवं आयुर्वेदीय चिकित्सकों से सलाह मशविरा किया। तीनों ने एक ही बात कही - एकांत में कम से कम बीस दिनों तक पूर्ण विश्राम करो। दीपक एकदम से उखड़ गया, क्योंकि अपने अभिभावकों को बार बार अनुरोध करने पर ही उसे वहाँ आने की स्वीकृति मिली थी। अब उसे पाठ्यक्रम तो छोड़ना ही पड़ेगा, साथ साथ सन्यासियों एवं प्रवीण शिक्षकों के साथ से भी बंचित रहना पडेगा। तीन दिनों तक अत्यधिक पीड़ा भोगने के बाद वह अब और अधिक बर्दास्त नही कर पा रहा था। इसलिए वह मंदिर पँहूच गया। ठीक संध्या आरती के बाद वह भगवान नृसिंहदेव के सामने खड़ा होकर प्रार्थना करने लगा - हे भगवान, कृपया पूरी दुःखदायी अवस्था की ओर ध्यान दें। (उसका पूरा शरीर घाव से भरा था एवं पीड़ा हो रही थी) कृपया मेरी सहायता कीजिये। तत्पश्चात् वह महाप्रसाद की पंक्ति में खडा हो गया। उँसकी अवस्था पर आश्चर्यचकित होकर पुजारी ने उसे प्रसाद दिया एवं सुरक्षा कर्मियों को उसे मंदिर से बाहर ले

जाने के लिये कहा। साथ ही साथ यह भी हिदायत दी कि इस छुआछुत की बीमारी को लेकर वह फिर मंदिर में न आये। दीपक अपने कमरे में लौट आया। यह सोचकर वह अत्यंत निराश हो गया कि उसे लगभग 17 दिन और इसी तरह पीड़ा भोग करना होगा। दूसरे दिन प्रातः 2 बजे नींद से उठने पर उसे स्फूर्ति का अनुभव हो रहा था। वह स्नान करने के लिए उठा एवं उसके आश्चर्य और प्रसन्नता का ठिकाना नही रहा जब उसने देखा कि सारे घाव ठीक हो चुके हैं। शरीर के सारे दाग मिट चुके हैं। बिना कोई थकान महसूस किये वह प्रातःकाल के सभी कार्यक्रमों में भाग लिया। दीपक कहता है - पवित्र धाम में उन्होंने जो कुछ किया, उसके लिए मैं भगवान नृसिंहदेव का कृतज्ञ हूं। उन्होंने मेरे जीवन की रक्षा की। मैं अपनी पीड़ा के संबंध में आपको नहीं बता सकता। उन्होंने मुझे एक दिन में ही ठीक कर दिया।

अंधरुपा देवी दासी का पत्र

3रा अक्टूबर 2006

हरे कृष्णा! मेरा नाम अंधरुपा देवी दासी है। सन् 1975 में मियामी, फ्लोरिडा में मैं श्रील प्रभुपाद द्वारा दीक्षित हुई थी। मेरे हेपटाइटिस - सी रोग के निदान के संबंध में मुझे बताने के लिए कहा गया था। सन् 2004 के ग्रीष्मकाल में श्रील जयपताका महाराज ने अलाछुआ, फ्लोरिडा के नये रमण रेती मंदिर का भ्रमण किया। मैं महाराजजी से मिली एवं इस संसार से मेरे प्रस्थान के लिए उनके आशीर्वाद की याचना की। मेरे ठीक होने की केवल 45 प्रतिशत संभावना थी। जयपताका महाराज ने मुझसे कहा - यह छड़ी देख रही हो। मायापुर में उसे भगवान नृसिंहदेव का स्पर्श करवाया गया है। उसके बाद उन्होंने उसे मेरे सिर पर स्पर्श करवाया। उस रात मुझे स्वप्न आया कि मुझे कुष्ठ रोग हो गया है एवं धीरे धीरे वह ठीक हो रहा है। दूसरे दिन प्रातः फ्लोरिडा विश्वविद्यालय से फोन आया। चिकित्सकों ने मुझसे कहा - "बधाई हो, आप हेपटाइटिस-सी मुक्त हो गए हैं। मात्र आठ सप्ताह में आपके जीवाणु निष्क्रीय हो गए हैं।" चिकित्सकों को आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि मुझे घातक किस्म की बिमारी थी। चिकित्सा प्रारम्भ होने पर मैंने प्रतिदिन भगवान नृसिंहदेव से प्रार्थना की - आपकी जो भी इच्छा हो, आप मुझे यहां से ले जा सकते हैं या आप मुझे स्वस्थ्य कर सकते हैं। जो भी आपको उचित लगे। लेकिन मुझे सर्वदा अपनी भक्तिमयी सेवा में लगे रहने दें। हे प्रभु, मुझे दूसरा मौका देने के लिए धन्यवाद। आपके समय के लिए धन्यवाद।

कृतज्ञतापूर्वक आपकी
- अंधरुपा देवी दासी

सरकारी चिकित्सक की प्रेरणा

डाः वासुदेव दास बंगलादेश के एक सरकारी चिकित्सक हैं। मार्च 2006 में चिकित्सा विज्ञान की छात्रा एवं उनकी पुत्री मिष्टी दास काफी बीमार हो गई। उनके जरायु में प्राणघातक जीवाणु की गाँठ हो गई थी। वे लोग उसे बम्बई लेकर आये, डहाँ उसकी चिकित्सा शुरु हो गई। पर शीघ्र ही चिकित्सकों ने जबाब दे दिया। डाः दास जुहु के इस्कान मंदिर परिदर्शन करने गये। वहां एक भक्त ने मायापुर में होनेवाले नरसिंह चतुर्दशी समारोह का एक प्रचार पत्र दिया। तत्पश्चात् उन्होंने उस समारोह में भाग लिया। वहाँ पर उन्हें मायापुर के नृसिंहदेव की लीलाओं के विषय में एक छोटी

पुस्तिका मिली। उस पुस्तक में उन्होंने पढा कि किस प्रकार भगवान नृसिंहदेव ने कुछेक रोग का चमत्कारी निदान किया था। उन्हें विश्वास हो गया कि भगवान नृसिंहदेव की कृपा से उनकी पुत्री भी रोगमुक्त हो जायगी। बंगलादेश लौटकर मायापुर के भगवान नृसिंहदेव के पुजारी से सम्पर्क स्थापित कर अपनी पुत्री की जीवन रक्षा के लिए उन्होंने विशेष पूजा निवेदन का अनुरोध किया। तत्काल ही मिष्टी का स्वास्थ्य सुधरने लगा। अब धीरे धीरे वह अपने साधारण जीवन की ओर लौट रही है। भगवान नृसिंहदेव की कृपा से मिली प्रेरणा से प्रभावित होकर वासुदेव दास ने अपने साथ घटित लीला की पुस्तिका छपवाकर बंगलादेश में बंटवाई। उनका कहना है - अपने व्यक्तिगत एवं आध्यात्मिक विकाश के लिए प्रत्येक व्यक्ति को भगवान नृसिंहदेव से प्रार्थना करनी चाहिये।

मायापुर में चमत्कार

28 अक्टूबर 2006 के दिन राधाकांत गोपालदास एवं पद्मा राधिका दासी के 14 वर्षीय पुत्र चक्रवर्ती के चेहरे पर एक पटाखा फट जाने से वह घायल हो गया। तुरंत उसे अस्पताल ले जाया गया। चिकित्सकों ने कहा कि उसके चेहरे पर दूसरे स्तर के जलने का घाव हुआ है एवं सुझाव दिया कि 1) सर्वप्रथम दवाइयाँ लगाकर चेहरे की ड्रेसिंग 2) एक पखवाड़े बाद रासायनिक क्रिया 3) 6 महिने या 1 वर्ष बाद प्लास्टिक शल्य चिकित्सा। दूसरे दिन प्रातः उसके अभिभावकों ने पंकजआंघ्री दास को चक्रवर्ती राज के जल्दी ठीक होने हेतु विशेष पूजा निवेदन करने का अनुरोध किया। अगले दो दिन तक वह अपनी शय्या पर पडा रहा। वह हिलडुल नहीं पा रहा था। यहाँ तक की कि वह आँखों की पलकें भी नही खोल पा रहा था। उसे बैरेकपुर के दिशा नेत्र अस्पताल में ले जाया गया। वहाँ पर चिकित्सकों ने पाया कि आँखों का स्वेत हिस्सा ही प्रभावित हुआ है एवं काला मणि प्रभावित नहीं हुआ है। इसलिए उसकी आंखों की ज्योति में कोई समस्या नहीं होगी एवं 15 दिनों के चिकित्सा के बाद स्वेत पर्दा भी ठीक हो जायगा।

2रा नवम्बर के प्रातःकाल पद्मा राधिका देवी दासी ने गुरु महाराज श्रील जयपताका स्वामी से सम्पर्क स्थापित किया एवं उन्हें घटना के संबंध में जानकारी दी। उन्होंने इंगित किया कि वे उसके पुत्र के लिए प्रार्थना करेंगे। साथ ही उसके ललाट पर नृसिंह तेल भी लगाया। सुबह में अपोलो अस्पताल में राय लेने के बाद उसे हवड़ा स्थित रेलवे अस्पताल ले जाया गया। वहाँ के एक प्रवीण चिकित्सक ने उसको जांचा एवं इसकी संपुष्टि की कि उसका जलना द्वितीय स्तर का है। तत्पश्चात् आवश्यक औषधि लगाने के लिए उसे चिकित्सा कक्ष में भेज दिया गया। लेकिन तीन मिनट के अंदर ही वहाँ का एक कर्मचारी चिकित्सा कक्ष से चिल्लाता हुआ द्रुत गति से बाहर निकला एवं अभिभावकों को अंदर ले गया। चक्रवर्ती को देखकर सभी स्तब्ध हो गए। वे आश्चर्य से भर गए। वहाँ पर चक्रवर्ती मुस्कुराते हुए खड़ा था। उसके चेहरे पर कोई भी घाव या दाग नहीं दीख रहा था। नृसिंहदेव की जय।

वहाँ पर स्थित चिकित्सक एवं अन्य कोई भी व्यक्ति उस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दे सका। एक ने कहा - मंदिर लौटकर आप अपने भगवान से इस संबंध में पूछ सकते हैं, यह तो आपके भगवान का चमत्कार है। भगवान नृसिंहदेव एवं राधा माघव की जय।

पद्मा राधिका देवी दासी
प्रधानाध्यापिका, भक्तिवेदांत नेशनल स्कूल, मायापुर